ऋग्वेद

ओ३म्

यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 20

वर्ष : 32 चैत्र-बैशाख वि0स0 2077 अंक : 4 अप्रैल 2020

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून का ग्रीष्मोत्सव
दिनांक 13 मई 2020 से 17 मई 2020 तक

आर्य समाज स्थापना दिवस (10 अप्रैल 1875)
के अवसर पर सभी पाठकों को हार्दिक शुभकामनाएं

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

नालापानी, देहरादून - 248008, दूरभाष: 0135-2787001

ग्रीष्मोत्सव (योग साधना एवं अथर्ववेद यज्ञ)

बैशाख ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष षष्ठी से कृष्ण पक्ष दशमी विक्रमी सम्वत् 2077 तक
तद्नुसार बुधवार 13 मई से रविवार 17 मई 2020 तक मनाया जायेगा।

योग साधना निदेशक	:	**स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी सरस्वती**
यज्ञ के ब्रह्मा	:	**डॉ सोमदेव शास्त्री, मुम्बई**
प्रवचनकर्ता	:	डॉ. सोमदेव शास्त्री, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
वेद पाठ	:	महर्षि दयानन्द ज्योतिर्मठ गुरूकुल पौंधा, देहरादून के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ एवं अन्य कार्यक्रमों के संयोजक	:	श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी हरिद्वार एवं पं० सूरत राम शर्मा, देहरादून
यज्ञ के व्यवस्थापक	:	पंडित सूरतराम शर्मा जी
भजनोपदेशक	:	पं० सत्यपाल पथिक, अमृतसर, पं० संदीप आर्य गिल, मेरठ एवं पं० उम्मेद सिंह विशारद, देहरादून

बुधवार 13 मई से रविवार 17 मई 2020 तक प्रतिदिन

योग साधना	:	प्रात: 5.00 बजे से 6.00 बजे तक
संध्या एवं यज्ञ	:	प्रात: 6.30 बजे से 8.30 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	प्रात: 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
यज्ञ एवं संध्या	:	सायं 3.30 बजे से 6.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	रात्रि 8.00 बजे से 10.00 बजे तक

ध्वजारोहण	- बुधवार 13 मई 2020 को प्रात: 9:00 बजे।
तपोवन, विद्या निकेतन जूनियर हाईस्कूल का वार्षिकोत्सव	- बुधवार 13 मई 2020 को प्रात: 10:00 से दोपहर 1:00 बजे तक
युवा सम्मेलन	- गुरूवार 14 मई 2020 को प्रात: 10:00 बजे से दोपहर 1:00 बजे तक
उद्बोधन	- आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, डॉ. सोमदेव शास्त्री एवं आचार्य डॉ. धनन्जय जी
महिला सम्मेलन	- शुक्रवार 15 मई 2020 को प्रात: 10:00 बजे से 1:00 बजे तक
महिला सम्मेलन की अध्यक्षता	- डॉ. अन्नपूर्णा जी
संयोजिका	- श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा
उद्बोधन	- डॉ. अन्नपूर्णा, डॉ. सुखदा सोलंकी, श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा एवं श्रीमती सरोज आर्या जी आदि
शोभायात्रा	- शनिवार 16 मई 2020 को प्रात: 6:00 बजे तपोभूमि के लिये शोभायात्रा जायेगी
संयोजक	- श्री मंजीत सिंह जी
भजन संध्या	- शनिवार 16 मई 2020 को रात्रि 8:00 बजे से 10:00 बजे तक
भजनोपदेशक	- श्रीमती मीनाक्षी पंवार, मास्टर उत्कर्ष अग्रवाल एवं पं० संदीप आर्य गिल
पूर्णाहुति	- रविवार 17 मई 2020 को पूर्णाहुति के उपरान्त ऋषिलंगर की व्यवस्था

सप्रेम आमंत्रण

आदरणीय महोदय/महोदया, स्व. बाबा गुरुमुख सिंह जी एवं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी, स्वामी योगेश्वरानन्द जी परमहंस एवं महात्मा प्रभु आश्रित जी ने तपोवन आश्रम को साधना के लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना था। आपसे प्रार्थना है कि परिवार व ईष्ट मित्रों सहित यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित होकर हमें कृतार्थ करें एवं अपने-अपने समाज/धार्मिक सत्संगों से यह निमंत्रण हमारी ओर से निवेदित करने की कृपा करें। आपके उदार सहयोग के लिए अग्रिम धन्यवाद।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी, सुधीर कुमार माटा, मंजीत सिंह, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, अशोक वर्मा, महेन्द्र सिंह चौहान, योगराज अरोड़ा, विजय कुमार, रामभज मदान, विनीश आहुजा।

एवं समस्त सदस्य, वैदिक साधन आश्रम सोसायटी

ओ३म्

पवमान

वर्ष–32 अंक–4

चैत्र–बैशाख 2077 विक्रमी अप्रैल 2020

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120 दयानन्दाब्द : 196

★

–: संरक्षक :–

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

–: अध्यक्ष :–

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

–: सम्पादक मण्डल :–

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य–

मो. : 9412985121

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

मोबाईल : 7310641586

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालंकार	3
आर्यसमाज द्वारा वैदिक धर्म में कर्तव्य कर्म	डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री	4
ऋषि दयानन्द और आर्य समाज	मनमोहन कुमार आर्य	8
वन–गमन से पूर्व श्रीराम का अपने पिता व माता से संवाद	मनमोहन कुमार आर्य	11
लांगूल दाह और लंका दाह	ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी	14
दौलत–धन–सम्पत्ति की दो लातें	म० आनन्द स्वामी सरस्वती जी	19
फूलों का चित्र और भौंरा	म० आनन्द स्वामी सरस्वती जी	20
राष्ट्रवाद पर स्वामी दयानन्द का चिंतन	डॉ० विवेक आर्य	21
अधिकतम युद्ध जीतने वाले हिंदू राजा ही पराजित दिखाए जाते हैं	डॉ० राकेश कुमार आर्य	24
वैदिक साधन आश्रम में होने वाले शिविरों, उत्सवों का संशोधित विवरण		26
अर्श या बावासीर		27
चतुर्वेद पारायण यज्ञ पर साधिका के विचार–श्रीमती रेखा चौधरी जी		30

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. "वैदिक साधन आश्रम"	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000/– प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000/– प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000/– प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1. वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष) — रु. 200/– वार्षिक
2. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000/–

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

श्रेष्ठता का प्रतीक है, आर्य शब्द

आर्य शब्द का अर्थ है– श्रेष्ठ या कुलीन। अथर्ववेद में कहा गया है–आर्यः ईश्वर पुत्रः अर्थात् आर्य परमेश्वर के पुत्र हैं। महाभारत में आर्य की परिभाषा दी गई है– ''शान्त तितिक्षुर्दान्त दाता दयालुश्नम्राचार्यः स्याद् षड्भिर्गुणः'' अर्थात् आर्य के छः गुण हैं। उनका प्रथम गुण है– शान्त स्वभाव। दूसरा गुण है– तितिक्षु होना अर्थात् सर्दी हो या गर्मी, सुख हो या दुःख एक ही भाव बनाए रखना। तीसरा गुण है– दानवीर होना। चतुर्थ गुण है– दयालुता। पांचवां गुण है– नम्रता और छठा गुण है– आचारवान् होना। इस प्रकार आर्य शब्द श्रेष्ठता का प्रतीक है। हमारा देश प्रारम्भ से ही आर्यावर्त्त कहलाता रहा है। आर्यावर्त्त के बारे में मनुमहाराज अपने श्रेष्ठ ग्रन्थ मनुस्मृति में कहते हैं।

आसमुद्रात्तु वै पुर्वादासामुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्त्तं विदुर्बुधाः।।

कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशसत्वतः परः।।

अर्थात् जो पूर्व समुद्र से लेकर पश्चिम समुद्र पर्यन्त विद्यमान् है, जिसके उत्तर में हिमालय और दक्षिण में विन्ध्याचल का मध्यवर्ती देश है, उसे आर्यावर्त्त कहते हैं। जिस देश में स्वाभाविक रूप से कृष्ण मृग विचरण करता है, वह आर्यावर्त्त देश यज्ञों से सम्बद्ध और श्रेष्ठ कर्मों वाले व्यक्तियों से युक्त देश है, ऐसा समझना चाहिए। आर्यावर्त्त देश में प्रारम्भ से ही श्रेष्ठ व्यक्ति निवास करते रहे हैं, इसीलिए जब महर्षि दयानन्द सरस्वती ने एक संस्था की स्थापना की तो उसका नाम आर्यसमाज रखा। यह श्रेष्ठ लोगों का समूह है। कुछ लोग मूर्तिपूजा, जागरण, पीपल आदि वृक्षों और जड़ वस्तुओं की पूजा करने को ही उपासना का मार्ग समझते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती के द्वारा धर्म की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए पक्षपात रहित न्याय और सबका हित करना धर्म है। यह धर्म प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से सिद्ध किए जाने योग्य और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के मानने योग्य हैं। वेद में मनुष्यों के लिए करने योग्य और न करने योग्य बातों का वर्णन, ईश्वर प्राप्ति के लिए स्तुति, प्रार्थना, उपासना और मनुष्य के कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञान बीज रूप में दिया गया है, इसलिए इसके पालन में किसी को भी कोई शंका या कठिनाई नहीं होनी चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 10 अप्रैल, सन् 1875 में सत्य, वेद और ज्ञान के प्रकाश की किरणें फैलाने हेतु आर्यसमाज की स्थापना की जिसके नियमों और सिद्धान्तों में परमेश्वर के उपरोक्त स्वरूप को अपनाने के लिए हमें प्रेरित किया। स्वामी दयानन्द की यह एक बड़ी देन है कि वेदों का उन्होंने फिर से हमें परिचय कराया और वेदों के ज्ञान को समस्त विद्याओं का मूल बताया । उन्होंने न केवल वेदों का भाष्य किया अपितु ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि आदि अनेक ग्रन्थ लिखे। हम सभी आर्यों और अन्य सभी सुधी पाठकों से निवेदन करते हैं कि कृपया अपने पूर्वाग्रहों को त्याग कर आर्यसमाज के सिद्धान्तों और नियमों को जानने का प्रयास करें। यदि देश में व्याप्त अज्ञान, अन्धकार, आडम्बर, साम्प्रदायिकता और अन्धविश्वास आदि को किसी भी सीमा तक दूर करने में हम सफल होते हैं तो यह आर्यसमाज की सफलता मानी जाएगी। हम अपने सुधी पाठकों को यह अंक आर्यसमाज विशेषांक के रूप में समर्पित कर रहे हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

ओ३म्

वेदामृत

जंगम–स्थावर का राजा

इन्द्रो यातोऽवसितस्य राजा, शमस्य च शृंगिणो वज्रबाहुः।
सेदु राजा क्षयति चर्शणीनाम्, अरान्न नेमिः परि ता बभूव।।

ऋग्वेद 1.32.15

ऋषिः हिरण्यस्तूपः आगिरसः। देवता अग्निः। छन्दः त्रिष्टुप्।

(वज्रबाहुः) वज्रभुज, (इन्द्रः) परमेश्वर, (यातः) चलने–फिरने वाले का, (अवसितस्य) निश्चल का (शमस्य) शान्त का, (शृंगिणः च) और तीक्ष्ण वृत्ति वाले का (राजा) राजा है। (सः इत्) वही (चर्शणीनां) मनुष्यों का (राजा) राजा होकर (क्षयति) निवास कर रहा है। (अरान्) अरों को (नेमिः न) परिधि के समान वह (ता) उन्हें (परि बभूव) चारों ओर से व्याप्त किये हुए है।

मैं अपने इन्द्र प्रभु का क्या वर्णन करूं, कैसे उसकी महिमा का गान करूं? उसकी महिमा के गीत गाने को जी चाहता है, पर वाणी में शब्द नहीं मिलते। फिर भी टूटे–फूटे शब्दों में ही सही, कुछ तो गुनगुना लूं, कुछ तो अपने मन की साध पूरी कर लूं। मेरा प्रभु चलने–फिरनेवाले जंगम अर्थात् चेतन जगत् और निश्चल होकर बैठे स्थावर अर्थात् जड़–जगत् दोनों का राजा है, दोनों पर उसका आधिपत्य है। वह पशु, पक्षी, सरीसृप, मानव आदि तथा वन, पर्वत, नदी, सागर, सूर्य, चन्द्र आदि सबका अधिष्ठाता और व्यवस्थापक है। उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता तक नहीं हिल सकता। वह शान्त जीवन व्यतीत करने वाले, तप–साधना में निरत रहने वाले शान्तवृत्ति ऋषि–मुनियों का भी राजा है और तीक्ष्णश्रृंग अर्थात् तीक्ष्ण साधनों का अवलम्बन करनेवाले तीक्ष्णवृत्ति रजोगुणियों का भी राजा है, नियन्त्रणकर्ता है। वह वज्रबाहु है, भुजा में वज्र धारण किये है और उच्छृंखलों को उनके उच्छृंखल कर्मों के अनुसार यथायोग्य दण्ड दे रहा है। कोई उसकी दण्ड–व्यवस्था से कितना ही बचना चाहे, बच नहीं सकता। वही हम सब **'चर्शणियों'** का, कृषिकर्ता मानवों का, भी राजा होकर निवास कर रहा है, चाहे हम अपनी मनोभूमि का कर्षण करके उसमें सद्गुणों का बीज वपन कर आन्तरिक सम्पदा को लहलहाते हों, चाहे हल चलाकर, उत्तम बीज बोकर बाह्य भूमि को सस्यश्यामला बनाते हों।

जैसे रथ–चक्र की नेमि समस्त अरों को चारों ओर से व्याप्त किये होती है और अपने में थामे होती है, वैसे ही जगत् का राजा वह इन्द्रदेव जगत् की सब वस्तुओं के चारों ओर व्याप्त होकर उन्हें सहारा दिये हुए है, तभी संसार के सब पदार्थ पृथक्–पृथक् इकाई होते हुए भी परस्पर सामंजस्य रखे हुए हैं और विश्व के चक्र को चला रहे हैं। अन्यथा उनकी स्थिति वैसी ही हो जाए, जैसी नेमि के टूट जाने पर रथ–चक्र के अरों की होती है, तब विश्वचक्र–प्रवर्तन ही समाप्त हो जाए।

आओ, हम एक स्वर से अपने उस राजराजेश्वर इन्द्र प्रभु के चरण–चंचरीक बनकर उसकी महिमा का गुंजार करें।

आचार्य डा. रामनाथ वेदालंकार
(वेद–मंजरी ग्रन्थ से साभार)

आर्यसमाज द्वारा प्रतिपादित वैदिक धर्म में कर्तव्य कर्म

—डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार किया गया और उनके द्वारा आर्यसमाज की स्थापना की गई। उनके द्वारा कार्य करने से पूर्व की स्थिति का अध्ययन किया जाए तो हम पाते हैं कि उनके सिद्धान्तों में मूल बातें ये थीं कि वेदज्ञान को महर्षि ने समस्त विद्याओं का मूल बताया है। स्वधर्म के महत्व पर उनके द्वारा अत्यन्त बल दिया गया है। उनके द्वारा धर्म की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि ईश्वर की आज्ञा का पालन करते हुए पक्षपात रहित न्याय और सबका हित करना धर्म है। यह धर्म प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से सिद्ध किए जाने योग्य और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के मानने योग्य हैं। अथर्ववेद के बारहवें काण्ड में धर्म की विस्तृत व्याख्या करते हुए इसका अर्थ सत्य, न्याय, सहिष्णुता, परोपकार, संयम, तप और दया आदि किया गया है। साथ ही इन्हें धर्म के सार्वभौम सिद्धान्त भी बताया गया है। वेद में मनुष्यों के लिए विधि अर्थात् करने योग्य और निषेध अर्थात् न करने योग्य बातों का वर्णन, ईश्वर प्राप्ति के लिए स्तुति, प्रार्थना, उपासना और मनुष्य के कल्याण के लिए आवश्यक ज्ञान बीज रूप में दिया गया है, इसलिए इसके पालन में किसी को भी कोई शंका या कठिनाई नहीं होनी चाहिए। आज विभिन्न सम्प्रदायों में ईश्वर प्राप्ति हेतु जो विभिन्न पूजा पद्धतियां हैं, उन्हीं को ही हम धर्म समझ लेते हैं या ऐसा कहें कि धर्म ही सम्प्रदाय के लिए प्रयोग में आने के कारण सम्प्रदायों के लिए भी रूढ़ हो गया है। वर्त्तमान समय में अनेक मत—मतान्तर वर्तमान हैं जिसमें पारस्परिक मतभेद, अज्ञान, व्यक्तिगत लाभ, भ्रम, मन्दबुद्धिता आदि होने से प्रत्येक समुदाय कुछ विशेष बातों को सिद्धान्त के रूप में लेकर मत—मतान्तर रूपी मृगमरीचिका फैलाने में अग्रसर है। संसार के मुख्य सम्प्रदाय ईसाई, बौद्ध, हिन्दू, कनफ्यूसियनिज्म, मुस्लिम, जैन, यहूदी, सिक्ख, ताओइज्म और जोरास्ट्रियन हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश के एकादश सम्मुल्लास में ऐसे अनेक सम्प्रदायों का उल्लेख किया है। ये सम्प्रदाय हैं— वाममार्गी, शैव, जैन, बौद्ध, वैष्णव, रामानुजीय, चक्रांकित, शंकराचार्य का अद्वैत, शाक्त, रामानन्दी, रामानुजीयमत, कबीरपन्थी, दादूपन्थ, रामस्नेही, गोकुलिये गुसाईं, बल्लभ, स्वामी नारायणमत, नारायणदशी, माध्वमत, तिलङ्कित मत, ब्रह्मसमाज, प्रार्थनासमाज, वेदान्ती, गिरीमत, पुरीमत, भारतीमत, सौतांत्रिकमत, खाखीमत नवीन वेदान्तमत, निश्चलमत, पुराणमत, नामधारीमत आदि। महर्षि दयानन्द द्वारा सत्यार्थप्रकाश लिखने और उनके देहावसान के बाद भी कई नये मत—पन्थ या सम्प्रदाय बने जिनमें राधास्वामीमत, ब्रह्मकुमारीमत, आनन्दमार्ग, महर्षि महेश योगी मत, हंसामत, सत्य साईं बाबा मत, आनन्दमयीमातामत, निरंकारीमत, मानव धर्म समाज आदि प्रमुख हैं। इस लेख में वेद की मान्यताओं के अनुसार प्रतिपादित वैदिक धर्म की मुख्य मान्यताओं का उल्लेख किया जाएगा। वैदिक मान्यताएँ संक्षेप में निम्नवत हैं:—

१—सृष्टि का निर्माण और वेद की आवश्यकता— महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थप्रकाश के आठवें सम्मुलास में ऋग्वेद के मन्त्रों के आधार पर कहते हैं कि यह सब जगत्

सृष्टि के पहले अन्धकार से आवृत, रात्रिरूप में जानने के अयोग्य, आकाशरूप सब जगत् तथा तुच्छ अर्थात् अनन्त परमेश्वर के सम्मुख एकदेशी आच्छादित था। पश्चात् परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से कारण रूप से कार्य को कार्यरूप कर दिया है। सब सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार और जो यह जगत् हुआ है और होगा उसका एक अद्वितीय पति परमात्मा इस जगत् की उत्पत्ति के पूर्व विद्यमान था और जिसने पृथिवी से लेकर सूर्यपर्यन्त जगत् को उत्पन्न किया है जो सब में पूर्ण पुरुष है और जो नाशरहित कारण और जीव का स्वामी, जो पृथिव्यादि जड़ और जीव से अतिरिक्त हैः वही पुरुष इस सब भूत, भविष्य और वर्तमानस्थ जगत् को बनाने वाला है। ऋ0 १०/(१२९/३), (ऋ0 १०/१२१/१), (यजु0 ३१/३),

यह जगत् निमित्त कारण परमेश्वर से उत्पन्न हुआ है परन्तु उसका उपादान कारण प्रकृति है।

२—वेद की आवश्यकता—

महर्षि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखते हैं कि हम जीव लोगों के लिए ईश्वर ने जो वेदों का प्रकाश किया है सो उसकी हम पर कृपा है। महर्षि वेदोत्पत्ति का प्रयोजन बताते हुए कहते हें कि परमेश्वर हम लोगों का माता—पिता के समान है। जैसे सन्तानों के ऊपर पिता ओर माता सदैव करुणा को धारण करते हैं कि सब प्रकार से हमारे पुत्र सुख पावें, वैसे ही ईश्वर सब मनुष्यादि सृष्टि पर कृपा दृष्टि सदैव रखता है, इससे ही वेदों का उपदेश हम लोगों के लिए किया है। जो परमेश्वर वेदविद्या का उपदेश मनुष्यों के लिए नहीं करता तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि किसी को यथावत् प्राप्त न होती, उसके बिना परम आनन्द भी किसी को न होता। जैसे परम कृपालु ईश्वर ने प्रजा के सुख के लिए कन्द, मूल, फल और घास आदि छोटे—छोटे पदार्थ भी रचे हैं सो ही ईश्वर सब सुखों के प्रकाश करने वाली, सब सत्य विद्याओं से युक्त वेद विद्या का उपदेश भी प्रजा के सुख के लिए क्यों न करता? क्योंकि ये जितने ब्रह्माण्ड में उत्तम पदार्थ हैं उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है सो सुख विद्या प्राप्ति से होने वाले सुख से हजारवें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सकता। ऐसा सर्वोत्तमविद्या पदार्थ जो वेद है, उसका उपदेश परमेश्वर क्यों न करता? इससे निश्चय करके यह जानना चाहिए कि वेद ईश्वर के ही बनाये हैं।

३—तीन अनादि पदार्थ— ईश्वर जीव और प्रकृति ये तीन पदार्थ अनादि हैं। महर्षि ऋग्वेद और यजुर्वेद के मन्त्रों के प्रमाणों के साथ कहते हैं कि ब्रह्म और जीव चेतनता और पालनादि गुणों से सदृश व्याप्य व्यापकभाव से संयुक्त परस्पर मित्रतायुक्त सनातन अनादि हैं और वैसा ही अनादि मूलरूप कारण ओर शाखारूप कार्ययुक्त वृक्ष अर्थात् जो स्थूल हो कर प्रलय में छिन्न—भिन्न हो जाता है वह तीसरा अनादि पदार्थ इन तीनों के गुण, कर्म और स्वभाव भी अनादि हैं। इन जीव ओर ब्रह्म में से एक जो जीव है, वह इस वृक्षरूप संसार में पापपुण्य रूप फलों को अच्छे प्रकार भोक्ता है और दूसरा परमात्मा कर्मों के फलों को भुगाता हुआ चारों ओर अर्थात् भीतर बाहर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। जीव से ईश्वर, ईश्वर से जीव ओर दोनों से प्रकृति भिन्न स्वरूप, तीनों अनादि हैं। यजुर्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि अनादि सनातनरूप प्रजा के लिए वेद द्वारा परमात्मा ने सब विद्याओं का बोध किया है। (ऋ0 १/१६४/२०), (यजु0 ४०/८)

४—मानव निर्माण— इस संसार में मनुष्य ही को कर्म—योनि मिली है और वह चिन्तनशक्ति से युक्त है। निरुक्त में कहा गया है—''मत्वा कर्माणि सीव्यति''। अतः वेदप्रतिपादित समस्त ज्ञान, कर्मकाण्ड और उपासना—मार्ग मनुष्य के लिए ही है। वही ब्रह्म—साक्षात्कार का अधिकारी भी है। अन्य प्राणि समूह तो 'भोग—योनि' में जन्म लेने के कारण स्वतन्त्र ज्ञान क्रिया से रहित, भय—शोक आदि प्रवृत्तियों से विवश होकर विभिन्न कर्मों में

प्रवृत्त होते हैं। सभी प्रकार के निर्माणों के लिए उत्तम विधि अपनायी जाती है परन्तु मनुष्य के निर्माण के लिए कोई भी विधि नहीं अपनायी जाती है। प्राचीन वैदिक कालीन ऋषियों ने मनुष्य को उत्कृष्ट बनाने हेतु संस्कारों का प्रावधान किया है। उत्तम संस्कारों को प्राप्त करके ही श्रीराम, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, धर्मात्मा युधिष्ठिर, स्वामी दयानन्द आदि महापुरुषों का निर्माण हुआ था। ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि संसार का ताना–बाना तनता हुआ प्रकाश के पीछे जाता है। बुद्धि से बनाये, परिष्कृत किये हुए ज्योतिर्मय, प्रकाशयुक्त रक्ष मार्गों की रक्षा कर, निरन्तर ज्ञान और कर्म का अनुष्ठान करने वालों के उलझन रहित कर्मों को विस्तृत कर, मनुष्य बन, देवों के हितकारी जन को, सन्तान को उत्पन्न कर।

तन्तुं तन्वन् भानुमन्विहि ज्योतिश्मतः पथो रक्ष धिया कृतान्।

अनुल्वणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।। (ऋ0 १०/५३/६)

धार्मिक, सुसभ्य और दयालु मनुष्यों के निर्माण के लिए संस्कार करने वाले विद्वानों की आवश्यकता है। संस्कारों के द्वारा ही वास्तव में मानव कहलाने योग्य व्यक्तियों का निर्माण सम्भव है।

५–वैदिक दर्शन का आधार हैं, ऋत और सत्य– प्राचीन महर्षियों ने सृष्टि के रहस्यों को समझने की अटूट जिज्ञासा और अपनी अनुभूति के बल पर सृष्टि के मूल में विद्यमान 'ऋत–तत्त्वों' का अन्वेषण किया था। वैदिक भाषा में यही ऋत कहलाता है। जड़ या चेतन सब में 'ऋत' का एक तन्तु ओत–प्रोत है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह–उपग्रह सभी ऋत पन्थ के अनुयायी हैं।

६–ईश्वर एक है और उसका निज नाम ओ३म् है– महर्षि सत्यार्थप्रकाश के सातवें सम्मुलास में लिखते हैं कि चारों वेदों में कहीं नहीं लिखा जिससे अनेक ईश्वर सिद्ध हों, किंतु यह लिखा है कि ईश्वर एक है। वह, यह भी लिखते हैं कि दिव्यगुणों से युक्त होने के कारण देवता कहे जाते हैं। जिसमें सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है। परमेश्वर देवों का देव होने से महादेव इसीलिए कहाता है कि वह सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्त्ता, न्यायाधीश और अधिष्ठाता है।

ईश्वर का निज व सर्वोत्तम नाम ओ३म् है– ओंङ्कार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है, क्योंकि इसमें अ, उ और म् तीन अक्षर मिलकर एक (ओ३म्) समुदाय हुआ है, इस नाम से परमेश्वर के बहुत नाम आते हैं। जैसे– अकार से विराट्, अग्नि और विश्वादि। उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजसादि। मकार से ईश्वर, आदित्य ओर प्रज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है। उसका ऐसा ही वेदादि सत्यशास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है कि प्रकरणानुकूल ये सब नाम परमेश्वर के ही हैं।

७–ईश्वर पूजा का वैदिक स्वरूप–महर्षि के अनुसार ''जो ज्ञानादि गुणवाले का यथायोग्य सत्कार करना है उसको पूजा कहते हैं।'' परमेश्वर की पूजा की क्या विधि हो सकती है? वेद कहता है कि परमात्मा आत्मिक, मानसिक, शारीरिक, सामाजिक आदि बलों का देने वाला है। इसी कारण से सकल देव एवं समस्त विश्व उसकी उपासना–पूजा–सेवा सत्कार, सम्मान करता है। पूजा का प्रकार क्या हो? उसकी आज्ञा के अनुसार चलना ही उसकी पूजा है, क्योंकि इसमें पूजक का भी कल्याण है। ईश्वर की आज्ञाओं के अनुकूल चलने में ईश्वर की पूजा है। ईश्वर पूजा का वैदिक स्वरूप परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना ओर उपासना करना है।

मूर्ति–पूजा आदि उपासना के अवैदिक रूप–मन्दिरो में जाकर या घर पर देवी–देवताओं

की जड़ मूर्ति स्थापित करना उनके ऊपर पुष्प, फल, नैवेद्य आदि अर्पित करते हुए उनकी पूजा करना अवैदिक है। यह वेदानुकूल कदापि नहीं कहा जा सकता है। मूर्ति–पूजा, जागरण, पीपल आदि वृक्षों की पूजा करना भी ईश्वर की वास्तविक उपासना से दूर अज्ञान के मार्ग पर भटकना है। अतः जड़ वस्तुओं की पूजा कभी भी नहीं करनी चाहिए।

७–वैदिक कर्म फल सिद्धान्त–जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है फल ईश्वराधीन है। सुख और दुःख का कारण कर्म ही हैं। योग दर्शन में कहा गया है– ''सति मूले तद्विपाकोजात्यायुर्भोगाः''। इसका अर्थ है– अविद्या, अस्मिता, राग–द्वेष और अभिनिवेश ये पांच क्लेश कर्माशयों के कारण हैं। क्लेश के मूल कर्माशयों = कर्म की वासनाओं के विपाक (फल) ही जाति, आयु और भोग के रूप में प्राप्त होता है। जाति का अर्थ है जन्म, आयु जीवन काल के लिए प्रसिद्ध है ओर भोग सुख–दुःख, मोह रूप हैं, जो देहाश्रित होते हैं। अर्जित कर्मों का फलोपभोग के बिना संक्षय नहीं होता। यही कारण है कि जीवनमुक्त पुरुष का शरीर तब तक बना रहता है, जब तक कि पुरातन कर्माशय विपाक का अन्त नहीं हो जाता। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। फल ईश्वराधीन है अर्थात् कर्ता को उसके कर्मों के अनुरूप ईश्वर फल देता है।

८–यज्ञ– वैदिक मान्यताओं में यज्ञ का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। समस्त वैदिक साहित्य के संकलन प्रारम्भ में मूल उद्देश्य कर्मकाण्ड ही रहा है। वैदिक आर्य यज्ञों से बहुत प्रेम करते थे। वे दैनिक, पाक्षिक, मासिक, चातुर्मासिक, वार्षिक आदि यज्ञ किया करते थे। इस प्रकार उनका जीवन यज्ञमय था।

९–षोडष संस्कार–वेदानुसार जीवन पद्धति अपनाते हुए धर्मानुसार कर्म करने का उद्देश्य है– 'मानव का निर्माण।' मनुष्य योनि में ही हम शुभ संस्कारों को अर्जित कर सकते हैं। संस्कार से अभिप्राय बौद्धिक परिष्कार के लिए किये जाने वाले उन अनुष्ठानों से है जिनमें वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य हो सके।

१०–वर्णाश्रम धर्म–प्राचीन भारतीय समाज का संगठन वर्ण व्यवस्था के अधार पर चार वर्णों –ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के रूप में हुआ था। भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था के आरम्भिक संकेत 'ऋग्वेद' में हैं। ऋग्वेद के एक मन्त्र में समाज की कल्पना पुरुष के रूप में की गई है। इसका मुख ब्राह्मण, भुजाएँ क्षत्रिय, उरू वैश्य और पैर शूद्र हैं। अर्थात् इन चार अंगों के समान ही चार वर्णों का समाज में स्थान और कर्तव्य हैं। ब्राह्मणों को अध्ययन और अध्यापन, क्षत्रियों को रक्षा आदि, वैश्यों को धनापार्जन आदि और शूद्रों को सेवा कार्य करना चाहिए। महाभारत में ऋग्वैदिक व्यवस्था को स्वीकार करके इसी पद्धति से समाज का विभाजन चार भागों में किया था। (ऋग्0 १०/९०/१२)

वर्ण–व्यवस्था का आधार जन्म हो या कर्म– वर्ण का आधार जन्म होना चाहिए या कर्म, यह विषय प्राचीन काल से ही विवादास्पद रहा है। वर्तमान समय में हिन्दुओं में जिस प्रकार से वर्ण व्यवस्था चल रही है वह निश्चित रूप से जन्म के आधार पर है। ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व, वैश्यत्व और शूद्रत्व की गणना जन्म के आधार पर होती है। कोई व्यक्ति अध्यापक हो, सैनिक हो, व्यापारी हो या सेवक है, यदि उसने ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया है तो उसको ब्राह्मण ही समझा जाता है। रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद् आदि में स्थान–स्थान पर गुण–कर्म को वर्ण का आधार कहा गया है परन्तु कालान्तर में यह व्यवस्था विकृत हो गई और समय के परिवर्तन के साथ ही गुण–कर्म के स्थान पर जन्म ने प्रमुखता ग्रहण कर ली है।

(लेख का शेष भाग अगले अंक में प्रकाशित किया जाएगा)

—आर्यसमाज के स्थापना दिवस 10 अप्रैल पर—

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार एवं रक्षा के लिये की थी

—मनमोहन कुमार आर्य

संसार में अनेक मत–मतान्तर एवं संस्थायें हैं जो अतीत में भिन्न–भिन्न लोगों द्वारा स्थापित की गई हैं व अब भी की जाती हैं। इन संस्थाओं को स्थापित करने का इसके संस्थापकों द्वारा कुछ प्रयोजन व उद्देश्य होता है। सभी लोग पूर्ण विज्ञ वा आप्त पुरुष नहीं होते। वह सभी अल्पज्ञ ही होते हैं। अल्पज्ञ का अर्थ होता है कि वह विद्या व अविद्या तथा ज्ञान व अज्ञान से युक्त होते हैं। इस कारण से सभी मत–मतान्तरों में जहां कुछ अच्छी बातें हैं वहां अविद्या से युक्त बातें भी हैं जिनसे देश व विश्व में अज्ञान के कारण अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हुई है। वर्तमान में सत्य वैदिक धर्म जिसके आद्य प्रवक्ता वा आचार्य स्वयं सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सृष्टिकर्ता व सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वर रहे हैं को विस्मृत कर दिया गया है। पांच हजार वर्ष पूर्व हुए महाभारत युद्ध के बाद देश में अव्यवस्थाओं के कारण अज्ञान व अविद्या में निरन्तर वृद्धि होती रही। अवैदिक व अज्ञान से युक्त मत–मतान्तर उत्पन्न होते रहे। मनुष्य दुःखी होते गये और मत–मतान्तरों के कारण तथा सत्य वेदज्ञान का प्रचार न होने के कारण मनुष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष से भी वंचित हो गये।

सृष्टि के आरम्भ से चल रही ऋषि परम्परा महाभारत के कुछ काल बाद महर्षि जैमिनी पर समाप्त हो गई। उनके बाद कोई सच्चा वेदज्ञानी ऋषि व योगी जिसमें दोनों का समन्वित रूप विद्यमान हो, उत्पन्न नहीं हुआ। सौभाग्य से देश में ऋषि दयानन्द (1825–1883) का प्रादुर्भाव हुआ। ऋषि दयानन्द सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल पर्यन्त हुए ऋषियों के समान ही पूर्ण ज्ञानी, ईश्वर के उपासक, योगी एवं वेदों के ज्ञानी थे। उन्होंने अपने ज्ञान व योग विद्या से ईश्वर का साक्षात्कार भी किया था। आर्ष विद्या का अध्ययन पूरा करने के बाद उनके सम्मुख अपने कर्तव्यों के निर्वाह का प्रश्न उपस्थित हुआ था। इस कार्य में उनके विद्या गुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी ने उनका मार्गदर्शन करते हुए उन्हें देश की दयनीय अवस्था से युक्त पीड़ित जनता के दुःखों से अवगत कराकर उन्हें अविद्या, अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियों तथा सामाजिक बुराईयों आदि को दूर करने की प्रेरणा की। ऋषि दयानन्द ने अपने गुरु की बातों को ध्यान से सुना और उन्हें पूरा करने का आश्वासन दिया था। सन् 1863 में अपने गुरु को दिये हुए वचनों के अनुसार ही उन्होंने अपने भावी जीवन का एक–एक क्षण देश से अविद्या के नाश तथा विद्या की वृद्धि में लगाया और भारत को विश्व का आध्यात्मिक विद्या का गुरु बनाने का प्रयास किया। उनकी कृपा से भारत आज आध्यात्मिक ज्ञान के क्षेत्र में विश्व गुरु है। इसका कारण ऋषि दयानन्द द्वारा दिये गये सत्य वैदिक सिद्धान्त और उनके अनुरूप वेद, दर्शन, उपनिषद, मनुस्मृति आदि पर विद्वानों के भाष्य तथा ऋषि के सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थ हैं। उनका जीवन चरित्र भी विश्व के महापुरुषों में सर्वतोमहान एवं क्रान्तिकारी है। ऋषि दयानन्द जैसे महापुरुष इतिहास में कम ही दृष्टिगोचर होते हैं। उन्होंने देश व विश्व की जनता को विद्या का अमृतपान कराकर सुखी व आनन्दित करने सहित अविद्या से मुक्त करने के लिये ही चैत्र शुक्ल पंचमी

अथवा दिनांक 10 अप्रैल, 1875 को आर्यसमाज की स्थापना मुम्बई में की थी।

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व सन् 1863–1875 की अवधि में देश भर में घूमकर वेदों की महत्ता से देशवासियों को परिचित कराया था। देश के शिष्ट व सभ्य जन उनके विचारों से प्रभावित हुए और उन्होंने अनुभव किया कि ऋषि के द्वारा प्रचारित वैदिक मान्यतायें ही तर्क एवं युक्तिसंगत हैं और उनके सिद्धान्त व भावनायें सत्य पर आधारित हैं तथा ऋषि दयानन्द स्वार्थशून्य एवं देशहित से युक्त हैं एवं वेद मार्ग पर चल कर ही देश उन्नति कर सकता है तथा सभी मानवों एवं प्राणीमात्र का कल्याण हो सकता है। ऋषि दयानन्द ने अपने सभी सिद्धान्तों को तर्क एवं युक्तियों पर आधारित किया। वेदों का संस्कृत–हिन्दी भाष्य करते हुए भी उन्होंने इस बात का ध्यान रखा है कि उनकी कोई बात व मान्यता सत्य, तर्क, युक्ति, मनुष्य व प्राणीमात्र के प्रतिकूल तथा ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में बाधक न हो। ऋषि दयानन्द ने जीवात्मा के जन्म ग्रहण करने से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त किये जाने वाले सभी कृत्यों को वैदिक विचारधारा के आधार पर अज्ञान व अन्धविश्वासों से सर्वथा शून्य तथा अल्प साधनों में सम्पन्न करने का विधान किया है। स्वामी दयानन्द की विचारधारा में आदि से अन्त तक कहीं कोई विरोधाभास तथा अन्धविश्वास एवं किसी के भी अहित का किसी प्रकार का विधान नहीं है।

वैदिक काल में समाज में प्रचलित आश्रम एवं वर्ण व्यवस्था को भी उन्होंने तार्किक आधार देने सहित उसे समाज की उन्नति में उपयोगी सिद्ध किया है। स्वामी दयानन्द जन्मना जाति पर आधारित व्यवस्था को देश व समाज के लिए अहितकर तथा अन्यायपूर्ण बताते थे। वह स्त्री व शूद्रों सहित सबको विद्या प्राप्ति व वेदाध्ययन का का अधिकार देते हैं एवं शिक्षा को वेदों पर आधारित कर वह सबको निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा देने का विधान भी करते हैं। ऋषि दयानन्द विद्या प्राप्ति के बाद व्यक्ति के गुण, कर्म तथा स्वभाव के आधार पर उसका वर्ण निर्धारित करने की प्राचीन व्यवस्था पर प्रकाश डालते है व उसे प्रस्तुत करते हैं। विद्वानों ने गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था का अध्ययन कर इसे समाज के लिये उपयोगी एवं देश व समाज की उन्नति में लाभकारी तथा व्यवहारिक पाया है। इसके साथ ही ऋषि दयानन्द ने वेदों के आधार पर बाल विवाह तथा अनमेल विवाह का विरोध कर विवाह को युवावस्था में गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित करने का विधान किया है। वह पुराणों का अध्ययन कर उसकी अनुचित बातों का त्याग करने की सलाह देते हैं और बताते हैं पुराण में जो बातें हैं वह विष मिश्रित अन्न के समान हैं। अतः पुराणों का सर्वथा त्याग कर वह वेद, दर्शन एवं उपनिषद सहित विशुद्ध मनुस्मृति तथा वेदानुकूल शास्त्रों की मान्यताओं को ही स्वीकार करने का विधान करते हैं। ऋषि दयानन्द ने विश्व के लोगों के हितार्थ वैदिक सत्य मान्यताओं से युक्त सर्वोपरि उत्तम तथा मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति करने वाला महत्वपूर्ण ग्रन्थ ''सत्यार्थप्रकाश'' प्रदान किया है। उनके अन्य ग्रन्थ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय एवं ऋग्वेद तथा यजुर्वेद पर संस्कृत व हिन्दी भाष्य भी मनुष्य जाति की दुर्लभ एवं सबसे मूल्यवान सम्पत्तियां हैं जिसका सदुपयोग कर मनुष्य साधारण से असाधारण, निम्न से उच्च और राक्षस व असुर से देवता बन सकता है।

मनुष्य अपनी बुद्धि को विकसित कर संसार के अधिकाधिक रहस्यों को जान सकता है और सृष्टिकर्ता ईश्वर का साक्षात्कार भी कर सकता है। ऋषि दयानन्द ने अपने समय में प्रचलित सभी अन्धविश्वासों सहित मिथ्या एवं अनुचित सामाजिक प्रथाओं को दूर किया तथा समाज को उनके लाभकारी विकल्प प्रदान किये। जड़ मूर्तिपूजा तथा फलित ज्योतिष को वह मनुष्य जाति का सबसे बड़ा शत्रु समझते थे। जड़मूर्ति पूजा के विरोध में उन्होंने 16 नवम्बर, 1869 को

काशी में विश्व के शीर्षस्थ लगभग 30 सनातन व पौराणिक मत के विद्वानों से शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया था। जड़मूर्ति पूजा के विरोध सहित उन्होंने माता, पिता, आचार्यों तथा विद्वानों सहित परिवार के वृद्धजनों की सेवा सुश्रुषा द्वारा पूजा व सम्मान करने का विकल्प दिया है और ईश्वर की उपासना करने के लिये सन्ध्या एवं दैनिक यज्ञ पद्धति को प्रचलित किया जो वैदिक काल से प्रचलित थी।

ऋषि दयानन्द ने देश की परतन्त्रता को अपने वैचारिक चिन्तन में स्थान दिया था। उन्होंने देश की गुलामी को दूर कर स्वतन्त्र कराने तथा अवैदिक मतों का पराभाव कर ईश्वर द्वारा प्रेरित धर्म का प्रचार व उसे जन–जन का धर्म बनाने के लिये भी सत्यार्थप्रकाश में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। उनका लिखा स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश व उसकी मान्यतायें मानव धर्म, सार्वजनिक–धर्म तथा विश्वधर्म का पर्याय है। देश की स्वतन्त्रता को रेखांकित कर उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में लिखा है **'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत–मतान्तर के आग्रहरहित, अपने और पराये का पक्षपातभून्य, प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।'** ऐसे ही कुछ वचन ऋषि दयानन्द जी ने अपने आर्याभिविनय आदि अन्य ग्रन्थों में भी कहे हैं। ऋषि के इन शब्दों से प्रेरणा ग्रहण कर प्रायः सभी आर्यसमाज के अनुयायियों ने किसी न किसी रूप में देश की आजादी में योगदान किया। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, पं. रामप्रसाद बिस्मिल तथा अनेक क्रान्तिकारियों ने प्रत्यक्ष रूप में ऋषि के इन शब्दों से ही प्रेरणा लेकर देश की स्वतन्त्रता में प्रमुख भूमिका निभाई थी। शहीद भगत सिंह का पूरा परिवार आर्यसमाज का अनुयायी था। उनके दादा सरदार अर्जुन सिंह दैनिक यज्ञ करते थे और भगतसिंह जी का बचपन में यज्ञोपवीत संस्कार एक आर्य पुरोहित पंडित लोकनाथ तर्कवाचस्पति जी ने कराया था। देश की आजादी में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज का योगदान विषयक प्रभूत साहित्य आर्यसमाज में सुलभ होता है। ऋषि दयानन्द के समकालीन महापुरुषों पर दृष्टि डालते हैं तो पाते हैं कि ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज ने जितना योगदान आजादी के आन्दोलनों में किया है, उतना अन्य किसी धार्मिक व सामाजिक संस्था ने नहीं किया। यह भी लिख दें कि आजादी खून देकर मिली है, अहिंसा का जप करने से नहीं मिली।

एक प्रश्न यह भी है कि यदि आर्यसमाज स्थापित न होता तो क्या होता? हमारा अनुमान है कि ऐसी स्थिति में वेद, सनातन धर्म एवं अहिंसा पर आधारित बौद्ध, जैन तथा अद्वैत मत आदि का अस्तित्व पूर्णतः विलुप्त व समाप्त हो जाता व हो सकता था यह ईसाई मत व इस्लाम में विलीन हो जाते। वैदिक सनातन धर्म की रक्षा का प्रमुख आधार ऋषि दयानन्द का सत्यार्थप्रकाश, आर्य विद्वानों का वेद प्रचार व धर्म रक्षा के कार्य, आर्य विद्वानों का विरोधी मतों से अनेक विषयों पर शास्त्रार्थ एवं शास्त्रार्थों में दूसरे पक्षों की पराजय आदि थे। इसके साथ डी.ए.वी. स्कूल आन्दोलन तथा गुरुकुलों की स्थापना से भी देश से अज्ञान दूर करने तथा लोगों को सत्य ज्ञान से परिचित कराने में सहायता मिली। इन संस्थाओं से अनेक प्रचारक तैयार हुए। आज आर्यसमाज की शिथिलता के कारण वैदिक धर्म व संस्कृति पर पुनः खतरे के बादल मण्डरा रहे हैं। हिन्दू समाज संगठित नहीं हो पा रहा है। विरोधी मत धर्मान्तरण व अन्य अनेक योजनाओं को अंजाम दे रहे हैं जिससे वैदिक धर्म व संस्कृति का ह्रास हो रहा है। आज जनसंख्या नियंत्रण की सर्वाधिक आवश्यकता है। सौभाग्य से हमारे प्रधानमंत्री और गृहमंत्री इस विषय को अच्छी तरह से समझते हैं। देश को उनसे बहुत आशायें हैं। ईश्वर उनको बल, शक्ति तथा बुद्धि दें जिससे वह सत्य धर्म की रक्षा करते हुए सनातन धर्म व संस्कृति की रक्षा करने में समर्थ हो सकें।

वन–गमन से पूर्व श्री राम का अपने पिता व माता से संवाद

–मनमोहन कुमार आर्य

राम को हमारे पौराणिक बन्धु ईश्वर मानकर उनकी मूर्तियों की पूजा अर्थात् उनको सिर नवाते हैं और यत्रतत्र समय–समय पर राम चरित मानस का पाठ भी आयोजित किया जाता है। स्मरण रहे कि वाल्मीकि रामायण ही राम के जीवन पर आद्य महाकाव्य एवं इतिहास होने सहित प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में परवर्ती काल में अनेक लोगों ने कुछ प्रक्षेप भी किये हैं परन्तु इनका पता लगाया जा सकता है। कुछ विद्वानों ने यह कार्य किये भी हैं। उनके प्रयत्नों का परिणाम है कि हमें शुद्ध रामायण उपलब्ध होता है जिसमें से एक स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती जी का ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण है। आगामी रामनवमी पर्व, चैत्र शुक्ल नवमी तद्नुसार 2 अप्रैल सन् 2020 को ध्यान में रखकर हम राम के राज्याभिषेक के निर्णय, उनके वनगमन तथा श्रीराम के अपने पिता दशरथ एवं माता कैकेयी के साथ संवाद का वर्णन कर रहे हैं। इसका वर्णन पढ़ व सुन कर हम स्वयं व अपनी भावी पीढ़ियों को सन्मार्ग दिखा सकते हैं और हमारी युवा पीढ़ी अपने देवता के समान माता–पिता को आदर सम्मान देकर उनकी पूजा वन्दना कर सके।

राम के राज्याभिषेक के निर्णय व वनगमन की कथा इस प्रकार है। महाराजा दशरथ ने राज्य पुरोहित वसिष्ठ को बुलाकर उन्हें कल अर्थात् अगले दिन होने वाले राम के राज्याभिषेक के विषय में राम को सूचित करने के लिये कहा। उन्होंने कहा कि हे तपोधन! आप राम के पास जाइए और उनसे कल्याण, यश और राज्य–प्राप्ति के लिये पत्नी सीता सहित उपवास कराइए। वेदज्ञों में श्रेष्ठ भगवान वसिष्ठ ''बहुत अच्छा'' कहकर स्वयं श्री राम के घर गये। महर्षि वसिष्ठ श्वेत बादलों के समान सफेद रंग वाले भवन में पहुंच कर श्री राम को हर्षित करते हुए बोले। हे राम! तुम्हारे पिता दशरथ तुम पर प्रसन्न हैं। वह कल तुम्हारा राज्याभिषेक करेंगे। अतः आज आप सीता सहित उपवास करें। यह कहकर मुनिवर वसिष्ठ ने श्रीराम एवं सीता जी से उस रात्रि को नियत व्रत वा उपवास कराया। इसके बाद राजगुरु वसिष्ठ राम द्वारा भली प्रकार सम्मानित एवं सत्कृत होकर अपने निवास स्थान को चले गये। वसिष्ठ जी के जाने के बाद श्रीराम एवं विशालाक्षी सीता जी ने स्नान किया। उन्होंने शुद्ध मन से एकाग्रचित्त होकर परमपिता परमात्मा की उपासना की। जब एक प्रहर रात्रि शेष रही तो वह दोनों उठे और प्रातःकालीन सन्ध्योपासन कर, एकाग्रचित्त होकर गायत्री का जप करने लगे। इस समाचार को सुनकर सभी प्रजाजनों ने अयोध्या को सजाया। राजमार्गों को फूल–मालाओं से सुशोभित एवं इत्र आदि से सुगन्धित किया। भवनों एवं वृक्षों पर ध्वजा एवं पताकाएं फहराई गईं। सभी लोग राज्याभिषेक की प्रतीक्षा करने लगे।

इसी बीच कैकेयी को अपनी दासी मन्थरा से राम के राज्याभिषेक की जानकारी मिली और साथ ही महाराज दशरथ से वर मांगने तथा राम को 14 वर्ष के लिये वन भेजने तथा भरत को कौशल देश का राजा बनाने का परामर्श मिला। मंथरा–कैकेयी के इस षड्यन्त्र ने राम को राजा बनाने की सारी योजना को धराशायी कर दिया। राज्याभिषेक के दिन राम प्रातः अपने पिता के दर्शन करने आते हैं। वहां पिता की जो दशा वह देखते हैं उसका वर्णन महर्षि वाल्मीकि जी ने करते हुए लिखा है कि राजभवन मेघ–समूह के समान जान पड़ता था। साथ के सब लोगों को अन्तिम डयोढ़ी पर छोड़ कर श्रीराम ने अन्तःपुर में प्रवेश किया। अन्तःपुर में जाकर श्रीराम ने देखा कि महाराज दशरथ कैकेयी के साथ सुन्दर आसन पर विराजमान हैं। वे दीन और दुःखी हैं तथा उनके मुख का रंग फीका पड़ गया है। श्रीराम ने जाते ही पहले अत्यन्त विनीत भाव से पिता के चरणों में शीष झुकाया, फिर बड़ी सावधानी से माता कैकेयी के चरणों का स्पर्श किया। श्री राम को देखकर महाराज दशरथ केवल 'राम!' ही कह सके। क्योंकि फिर महाराज के नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी। उनका कण्ठ बन्द हो गया। फिर वे न तो कुछ देख ही सके और न बोल ही सके। अपने पिताजी की ऐसी असम्भावित दशा देख और उनके शोक का कारण न जानकर श्रीराम ऐसे विक्षुब्ध हुए जैसे पूर्णमासी के दिन समुद्र क्षुब्ध होता है। सदा पिता के हित में लगे रहने वाले राम विचारने लगे कि क्या कारण है कि पिता इतनी प्रसन्नता के अवसर पर भी न तो मुझसे प्रसन्न हैं और न ही मुझे आशीर्वाद दे रहे हैं।

राम पिता दशरथ तथा माता कैकेयी को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि और दिन तो पिताजी क्रुद्ध होने पर भी मुझे देखते ही प्रसन्न हो जाया करते थे परन्तु आज मुझे देखकर उन्हें कष्ट क्यों हो रहा है? इस चिन्ता से श्रीराम का मुंह उतर गया। दीनों की भांति शोक–पीड़ित और द्युतिहीन श्रीराम कैकेयी को अभिवादन करके बोले। यदि अज्ञानवश मुझसे कोई अपराध हो गया हो जिससे पिताजी मुझसे अप्रसन्न हैं तो आप मुझे उस अपराध को बतायें और मेरी ओर से आप इनकी शंका का निवारण कर इन्हें प्रसन्न करें। महाराज का कहना न मानकर उनको असन्तुष्ट एवं कुपित कर मैं एक क्षण भी जीना नहीं चाहता। जब श्रीराम ने कैकेयी से उपर्युक्त वचन कहे तब कैकेयी ने यह धृष्टता एवं स्वार्थपूर्ण वचन कहे। कैकेयी ने कहा हे राम! न तो महाराज तुमसे अप्रसन्न हैं, न ही इनके शरीर में कोई रोग हैं। इनके शरीर में कोई बात है जिसे तुम्हारे भय से यह कहते नहीं। यदि तुम यह बात स्वीकार करो कि महाराज उचित या अनुचित जो कुछ कहें उसे करोगे तो मैं तुम्हें सब कुछ बतला दूं। कैकेयी के इन वचनों को सुनकर राम अत्यन्त दुःखी हुए। उन्होंने महाराज दशरथ के समीप बैठी हुई कैकेयी से कहा 'अहो! धिक्कार है!! हे देवि! आपको ऐसा कहना उचित नहीं। महाराज की आज्ञा से मैं जलती चिता में कूद सकता हूं, हलाहल विष का पान कर सकता हूं और समुद्र में छलांग लगा सकता हूं। अपने गुरु, हितकारी, राजा और पिता के आदेश से ऐसा कौन–सा कार्य है जिसे मैं न कर सकूं? हे देवि महाराज दशरथ को जो भी अभीष्ट है वह तू मुझसे कह। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं उनकी आज्ञा का पालन करूंगा। माता! सदा स्मरण रख राम दो प्रकार की बात नहीं कहता अर्थात् राम जो कहता है वही करता है।'

राम के इन शब्दों को सुनकर अनार्या कैकेयी सरल स्वभाव एवं सत्यवादी श्रीराम से ये

कठोर वचन बोली। हे राम! पूर्वकाल में देवासुर–संग्राम में शत्रु के बाणों से पीड़ित और मेरे द्वारा रक्षित तुम्हारे पिता ने मेरी सेवाओं से प्रसन्न होकर मुझे दो वर दिये थे। हे राम! उन दो वरों में से मैंने एक से तो 'भरत का राज्याभिषेक' और दूसरे से 'तुम्हारा आज ही दण्डकारण्य–गमन' मांगा है। हे नरश्रेष्ठ! यदि तुम अपने पिता को और अपने आपको सत्यप्रतिज्ञ सिद्ध करना चाहते हो तो मैं जो कुछ कहूं उसे सुनो। 'तुम पिता की आज्ञा के पालन में तत्पर रहो। जैसा कि उन्होंने प्रतिज्ञा की है–तुम्हें चौदह वर्ष के लिए वन में चले जाना चाहिए। हे राम! महाराज दशरथ ने तुम्हारे राज्याभिषेक के लिए जो सामग्री एकत्र कराई है उससे भरत का राज्याभिषेक हो। तुम इस अभिषेक को त्याग कर तथा जटा और मृगचर्म धारण कर चौदह वर्ष तक दण्डक वन में वास करो। भरत कौसलपुर में रह कर विभिन्न प्रकार के रत्नों से भरपूर तथा घोड़े, रथ और हाथियों सहित इस राज्य का शासन करे। यही कारण है कि महाराज करुणा से पूर्ण हैं, शोक से उनका मुख शुष्क हो रहा है और वे तुम्हारी ओर देख भी नहीं सकते। हे रघुनन्दन! तुम महाराज की इस प्रतिज्ञा को पूर्ण करो। राम! महान् सत्य के पालन द्वारा तुम महाराज का उद्धार करो।' कैकेयी के इस प्रकार के कठोर वचन बोलने पर भी श्रीराम को कोई शोक नहीं हुआ परन्तु महाराज दशरथ जो पहले ही दुःखी थे, राम के संभावित वियोग के कारण होने वाले दुःख से अति व्याकुल हुए।

कैकेयी के इन कठोर वचनों पर राम की प्रतिक्रिया संसार के सभी लोगों मुख्यतः युवा पुत्रों को पढ़नी चाहिये। शत्रु–संहारक श्रीराम मृत्यु के समान पीड़ादायक कैकेयी के इन अप्रिय वचनों को सुनकर तनिक भी दुःखी नहीं हुए और उससे बोले ''बहुत अच्छा'' ऐसा ही होगा। महाराज की प्रतिज्ञा पूर्ण करने के लिए मैं जटा और वल्कल वस्त्र धारण कर अभी नगर को छोड़कर वन को जाऊंगा। राम ने कहा 'मैं यह अवश्य जानना चाहता हूं कि अजेय तथा शत्रु–संहारक महाराज पूर्ववत् मुझसे बोलते क्यों नहीं? एक मानसिक दुःख मेरे हृदय को बुरी तरह से जला–सा रहा है कि महाराज ने भरत के अभिषेक के विषय में स्वयं मुझसे क्यों नहीं कहा। महाराज की तो बात ही क्या मैं तो तेरे कहने से ही प्रसन्नतापूर्वक भाई भरत के लिये राज्य ही नही अपितु सीता, अपने प्राण, इष्ट और धन सब कुछ वार सकता हूं।' श्री राम के इन वचनों को सुन कैकेयी अति प्रसन्न हुई। राम के वनगमन के सम्बन्ध में विश्वस्त होकर वह श्रीराम को शीघ्रता करने के लिए प्रेरित करने लगी।

क्या आज के युग में कोई पुत्र राम के समान अपने माता–पिता का शुभचिन्तक, आज्ञाकारी तथा उनके लिये अपने जीवन को संकट में डाल सकता है? हमें लगता है कि उपर्युक्त पंक्तियों में वर्णित राम के आदर्श को कोई पुत्र निभा नहीं सकता। इसी लिये रामायण संसार का आदर्श ग्रन्थ है। संसार के सभी स्त्री–पुरुषों व युवाओं को इसे नियमित पढ़ना चाहिये और इससे शिक्षा लेकर अपने परिवार व माता–पिता को सुख व शान्ति प्रदान करनी चाहिये। आगामी रामनवमी पर श्रीराम का जन्मदिवस है। हमें इस दिन इन पंक्तियों को पढ़कर और इन पर मनन कर श्री राम को अपनी श्रद्धांजलि देनी चाहिये और उनके जीवन का अनुकरण करने का व्रत लेना चाहिये। हमने इस लेख की सामग्री स्व. स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती जी की पुस्तक 'वाल्मीकि रामायण' से ली है जिसके लिये हम उनका आभार एवं वन्दन करते हैं।

लांगूल दाह और लंका दाह

—ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी

कपीनां किल लांगूलमिष्टं भवात भूषणम्।
तदस्य दीप्यतां शीघ्रं तेन दग्सेन गच्छतृ।।
सु० ५३।३

''वानर लोगों का बहुत प्यारा और पवित्र भूषण ''लाँगूल'' होता है सो इसका यही दग्ध करदो, जिससे हीन हुआ यह अपना बहुत अपमान समझेगा तथा स्वदेश जाने पर इसके बन्धु, मित्र व जाति के लोग भी इसे लज्जित करेंगे।''

लांगूल वास्तव में वानर जाति का एक जातीय भूषण था, जिसका पराये हाथ से बिगड़ जाना वे जातिमात्र का अपमान समझते थे, जैसाकि आजकल भी अंग्रेज लोग टोपी का, सिख पगड़ी व केशों का, पठान कुरान का, आर्य यज्ञोपवीत का, राजपूत खण्डे का समझते हैं। इसी विचार से रावण ने यह दण्ड विचार किया, क्योंकि इसे वह महादण्ड मानता था। लांगूल नामक पृच्छ के होने से जिन्होंने हनुमान् को पशु बना लिया उन्होंने लांगूल को पूंछ बना लिया, परन्तु यदि वास्तव में लांगूल पुच्छ का व किसी अंग विशेष का नाम होता तो रावण वा०रा० सुन्दर कांड सर्ग ५३ के उपर्युक्त श्लोक ३ में ''इष्ट भवति भूषण'' न कहकर ''अंगम् भवति ह्यत्तुमम्'' कहता। एक जैनी पण्डित ने हमें बताया था कि दशरथ जातक में ''लांगूलः'' कर—कंकण का नाम है। सम्भावना भी यही है कि वह कर—कंकण वीरता का पदक होता हो। लंका—दाह एक अलंकारिक प्रयोग भी हो सकता है। राजनीति विशारद हनुमान् ने अपने राजनीति—कौशल से विभीषण और उसके कुछ साथियों को अपने पक्ष में कर लंका में फूट की आग लगाई थी। किन्हीं के अनुसार महावीर ने अपने शौर्य प्रदर्शन द्वारा लंकावासियों के हृदय में भय और चिन्ता की अग्नि लगा दी थी।

रावण की आज्ञा पाकर दूतों ने हनुमान के ''लांगूल'' को उतार आग लगा दी और उसे सभा से बाहर निकालकर सारे नगर में इस दण्ड की घोषणा कर दी जिससे अनेकों धर्मात्मा पुरुषों और सीता को कष्ट हुआ। हनुमान् इस दण्ड से बहुत दुःखी हुए और इसका उत्तर उन्होंने यह विचारा कि, जिस प्रकार लंकापति ने मेरा उत्तम भूषण नष्ट किया है, उसी प्रकार मैं लंका के भूषण अशोक—वाटिका को नष्ट करूँगा जो इस नगरी का विशेष अलंकाररूपी गर्भस्थान है। इस विचार के अनुसार अवसर पाकर उन्होंने लंका को आग लगा दी। जब वह जल कर भस्म होने लगी तब क्रोध का आवेग कम होने पर हनुमान् के मन में कुत्सा(आत्म निंदा) उत्पन्न हो गई, जिससे खिन्न हो वे सोचने लगे, कि मैंने यह अच्छा नहीं किया। वे सोचते हैं—

धन्याः खलु महात्मानो ये बुद्ध या कोपमुत्थितम्
निरुन्धन्ति महात्मानो दीप्तमग्निमिवाम्भसा।। ५५।१

क्रुद्धः पापं न कः कुर्यात्ऽक्रुद्धो हन्याद् गुरूनापि।
क्रुद्धः परुशया वाचा नरः साधुनधिक्षिपेत्।। ५५।४

वाच्यावाच्यं प्रकुपितो न विजानाति कहिंचित्।
नाकार्यमस्ति क्रुद्धस्य नावाच्यं विद्यते क्वचित्।। ५५।५

यः समुत्पतितं क्रोधं क्षमयैव निरस्यति।
यथोरगस्त्वचं जीर्णा स वै पुरुश उच्यते।। ५५।६

धिगस्तु मां सुदुबुर्द्धि निर्लज्जं पापकृत्तमं।
अचिंतायित्वा तां सीतामग्निदं स्वामिघातकम् ५५।७

यदि दग्धात्वियं सर्वा नूनमार्यापि जानकी।
दग्धा तेन मया भर्तुर्हतं कार्यमजानता। ५५।८

''धन्य हैं वे महात्मा लोग जो उत्पन्न हुए क्रोध को वैसे ही बुद्धि से रोक लेते हैं, जैसे कि जल से प्रज्वलित अग्नि शान्त हो जाती है।''

यदि क्रोध को न रोका जाय तो क्रोधवश पुरुष क्या पाप नहीं करता? क्रोध से वशीभूत होकर गुरूओं को भी मार देता है और न करने योग्य कर्म भी कर डालता है और न बोलने योग्य वचन बोल देता है। जो पैदा होते क्रोध को सांप की कंचुकीवत् परे फेंक देते हैं वास्तव में वही पुरुष धन्य हैं। धिक्कार मुझको कि जिसने क्रोधवश अग्नि लगाते समय सीता का भी ध्यान न किया, क्योंकि सीता को उस अग्नि से हानी पहुँची तो मेरा सारा यत्न ही व्यर्थ हो जायेगा तथा मैं सदा के लिए स्वामी की दृष्टि में अविचारी ठहरूँगा।

हनुमान का लौटना

इस सन्ताप के पीछे वह सीता की सुध के लिए फिर सीता की कुटी में गये और सीता को प्रसन्न देखकर अपने स्थान को लौटने की आज्ञा मांगी। तब माता सीता ने कहा कि हनुमान्! तुम्हें देखकर मैं अपने दुःख को कुछ भूल गयी थी, अब तुम भी जा रहे हो तो बताओ अब मैं भगवान् श्री राम की कथा सुने बिना कैसे रह सकूँगी?

अध्यात्म रामायण में उस समय श्री हनुमान जी के वचन इस प्रकार हैः–

यद्य व देवि मे स्कन्धमारोह क्षणमात्रतः।
रामेण योजयिश्यामि मन्यसे यदि जानकि।।

''देवि जानकी! यदि ऐसी बात है और आप स्वीकार करें तो मेरे कन्धे पर चढ़ जाइये, मै एक क्षण में ही आपको श्री राम से मिला दूंगा।''

वाल्मीकि रामायण में और भी विस्तृत वर्णन है। वहाँ हनुमान् जी के इस प्रस्ताव पर श्री जनक नन्दिनी कहती हैं–''हनुमान्! स्वेच्छा से किसी पुरूष को कैसे स्पर्श कर सकती हूँ। श्री राम वानरों के साथ यहाँ आकर रावण को युद्ध में मारकर मुझे ले जायें इसी में उनकी शोभा है। इसलिये तुम जाओ, मैं किसी तरह कुछ दिन प्राण धारण करूँगी।''

इसके बाद रामचरित मानस में हनुमान् जी के वचन इस प्रकार हैः–

मातु मोहि दीजै कुछ चीन्हा। जैसे रघुनायक मोहि दीन्हा।।

तब सीता जी ने अपनी चूड़ामणि हनुमान् जी को दी, उसे पाकर हनुमान् जी बड़े प्रसन्न हुए।

लंका में इस प्रकार कृतकार्य हो तथा सीता को पूरी सान्त्वना देकर हनुमान् फिर उसी मार्ग से अपने देश को लौटे और मार्ग में तैरते–तैरते सागर के मध्य में मैनाक पर्वत पर जा टिके और वहाँ उन्होंने पूर्ववत् जलपानादि किया और विश्राम लेकर आगे चले–

आजगाम महातेजाः पुनर्मध्येन सागरम्।
पवतेन्द्रं सुनाभं च समुपस्पपृष्य वीर्यवान्।।
सु० ६८।१३

मैनाक से चलकर ज्योंही समुद्र के दूसरे पार पहुँच कर हनुमान् ने हर्ष शब्द किया, त्योंही जाम्बवान्, अंगद आदि सब वानरों ने जान लिया कि सब तरह से कृतकार्य होकर हनुमान् आ रहे हैं, क्योंकि बिना कार्य सिद्धि किये लौटने पर ऐसा हर्ष सूचक शब्द नहीं हुआ करता।

समुद्र पार कर अब हनुमान् महेन्द्र पर्वत पर पहुँचे, जहाँ कि सब साथी बैठे थे तो सबको बड़ा हर्ष हुआ। आपस में सत्कार सम्मान के पीछे सब सीता के समाचार पूछने लगे। तिस पर हनुमान् ने बड़े आनन्द दायक शब्दों में कहा–''हाँ मैं देवी सीता को देख आया हूँ। सीता अशोक वाटिका में अनेक घोर राक्षसियों से रक्षित हैं तथा राम वियोग में पृथिवी पर सोती है। कभी–कभी किंचत् आहार करती हैं। श्रृंगार त्याग कर एक वेणी मात्र धारण किये और अति कृष शरीर हो रही हैं।''

सीता का समाचार सुनकर सब लोग प्रसन्नता प्रकट करते हुए हनुमान् की बड़ाई करने लगे। अंगद ने भरी सभा में कहा, ''कपिवर! सत्व तथा वीर्य में तुम्हारे समान कोई नहीं जो तुम समुद्र पार जाकर कार्य करके यहां आये हो। वास्तव में तुम हम लोगों के जीवन के दाता हो। तुम्हारे प्रसाद से हम सब सिद्धार्थ हो राम से मिलेंगे। धन्य है तुम्हारी स्वामि भक्ति और धन्य है तुम्हारा वीर्य एवं धैर्य। बधाई हो तुम्हें, तुमने यशस्विनी राम–पत्नी का दर्शन किया है क्योंकि अब राम सीता–वियोग के दुःख को त्याग देंगे। हे हनुमान्! अब हम समुद्र–लांधन, लंका–दर्शन और सीता तथा रावण के दर्शन का वृतान्त सुनना चाहते हैं सो तुम सुनाओ।''

जाम्बवान् ने भी इस अनुरोध को दुहराया। अंगद और जाम्बवान् की आज्ञा से यात्रा वृतान्त सुनाते हुए समुद्र का तैरना, महात्मा मैनाक का अतिथि होना, सुरसा समागम, राक्षसी लंका का पराजय, फिर लंका में घूमना, बड़ी कठिनता से सीता का पता लगाना, रावण की क्रूरता, राक्षसियों का दुर्व्यवहार, सीता की दृढ़ता एवं राम–भक्ति, विभीषण पुत्री कला तथा त्रिजटा का सद्व्यवहार, अपना रामदूतत्व प्रकट करना, राम की मुद्रा देना, सीता से राम के लिए मणि लेना, अशोक वाटिका का नाश, राक्षसों से बांधे हुए रावण के सम्मुख जाना, रावण की ओर से वध दण्ड, विभीषण द्वारा वध–निषेध, लांगूल–दहन एवं सीता का अपूर्व शील सुना कर रावण के जीतने के अर्थ उद्योग करने के लिये हनुमान् ने उन सबको बड़े प्रभावशाली शब्दों में प्रेरणा की।

समस्त वानरों के सहित श्री हनुमान् जी वहाँ से चलकर किश्किन्धा पहुँचे। वहाँ सुग्रीव के मधुवन में आनन्दपूर्वक सब वानरों ने अंगद की आज्ञा लेकर फलाहार किया। रक्षकों ने आकर वानरराज सुग्रीव के पास इसकी सूचना दी, उस समय लक्ष्मण के पूछने पर सुग्रीव ने कहा–''भाई लक्ष्मण! इन सब बातों से मुझे तनिक भी सन्देह नहीं रहा कि हनुमान् ने ही भगवती सीता का दर्शन किया है। वानर श्रेष्ठ हनुमान् में कार्य सिद्धि करने की शक्ति, बुद्धि, उद्योग पराक्रम और शास्त्रीय ज्ञान सभी कुछ हैं।'' इसके अतिरिक्त उन्होंने और भी बहुत सी बातें ऐसी कहीं, जिनसे श्री हनुमान् जी का प्रभाव व्यक्त होता है।

फिर सुग्रीव ने तुरन्त ही सब वानरों के साथ हनुमान जी को अपने पास बुला लिया और वे सीताजी का कुशल–समाचार जान कर बड़े प्रसन्न हुए। सब मिलकर श्री राम जी के पास आये। उस समय श्री रामचरितमानस के अनुसार हनुमान् जी के महत्व का वर्णन करते हुए जाम्बवान् ने कहा है–

नाथ पवन सुत कीन्हि जो करनी।
सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी।

इसके बाद हनुमान् जी ने श्रीराम के चरणों में प्रणाम किया और श्री राम ने हनुमान् को हृदय से लगाया। तब हनुमान् जी ने कहा–देवी सीता पतिव्रत्य के कठोर नियमों का पालन करती हुई शरीर से कुशल हैं, मैं उनके दर्शन कर आया हूँ। हनुमान् जी के ये अमृत के समान वचन सुनकर श्री राम और लक्ष्मण को बड़ा हर्ष हुआ। श्रीराम के मन का भाव जानकर हनुमान जी ने उन्हें सीता खोज का सम्पूर्ण वृत्त कहा। प्रसन्न मन हनुमान् बड़ी नम्रता से कहने लगे–''महाराज! मैं विस्तार युक्त समुद्र को पार कर सीता को ढूँढ़ता हुआ समुद्र के दक्षिणी तीर पर महा नगरी लंका में गया, जहाँ का राजा रावण है। वहाँ मैंने सीता देवी का दर्शन किया। वह राक्षसियों से बार–बार झिड़की जाकर भी आप में सब प्रकार मनोरथ रखती हैं। आपके विरह से उनकी दशा दीन, शरीर कृश, वस्त्र मलीन, क्लान्त, वेणी एक जटावत् हो रही है तथा रावण के दुर्व्यवहार से वे दुःखमना प्राण त्यागने को उद्यत हैं।

''बड़ी कठिनता से मैंने माँ सीता को अपने विषय में विश्वास दिलाया और आपकी सुग्रीव महाराज से मित्रता आदि का वृतान्त सुनाया जिसे सुनकर सीता बड़ी प्रसन्न हुई और अपने दुःख की अवधि तथा आपके सेना सहित समुद्र पार आने के विषय में पूछने लगीं, जिस पर मैंने सब उपाय बता कर सीता को सन्तोष एवं शान्ति रखने के लिये प्रार्थना की।''

चलते समय मुझे माँ ने यह चूड़ामणि दी थी। उनके जीने का एक मास ही शेष है। मणि पाकर श्री राम, लक्ष्मण सहित बहुत प्रसन्न होकर कहने लगे, यदि सीता का जीवन एक मास और रह गया है तो बहुत थोड़ा समय शेष है। अब हम जब कि सीता के निवास स्थान का पता और मार्ग सुन चुके हैं, तब यहाँ क्षण भर भी नहीं रह सकते, इसलिए हमें भी वहाँ ले चलो और जो कुछ सीता ने तुमसे कहा है वह सब सुनाओ।

राम के उत्तर में हनुमान ने कहा, ''महाराज! चलते समय मुझे सीता ने अपने दुःख को सुनाकर उससे मुक्त होने के उपायों का वर्णन करते हुए यह कहा कि किस प्रकार वानर और राम–लक्ष्मण इतने समुद्र को उलांघ कर यहाँ आयेंगे तथा मेरी राक्षसों के हाथ से मुक्ति होगी कि नहीं? इस पर जब मैंने कहा कि राक्षस भवन से तुम्हारी मुक्ति मैं अभी करा देता हूँ तब सीता ने बड़े धैर्य और अभिमान से कहा कि यह तो ठीक है, कि तुम मुझे सकुशल ले जा सकते हो, परन्तु इसमें मेरे महाबली पति रामचन्द्र की मान–हानि है। उनके लिये यही उचित है कि वह दल–बल सहित यहाँ आवें और रावणादि को मारकर मुझे ले जावें। दूसरे मैं पतिव्रता स्त्री हूँ और अपने स्वामी के अतिरिक्त किसी पर–पुरुष की देह को जीवन सुख के लिए तो क्या मोक्ष लाभ के लिए भी स्पर्श नहीं कर सकती। इस पर मैंने कहा, ''अच्छा देवि! यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो शीघ्र ही राम दल–बल सहित यहाँ आकर और राक्षसों को जीतकर तुमको सम्मानपूर्वक साथ ले जायेंगे और अति शीघ्र अयोध्या में तुम्हारे साथ राजतिलक धारण कर प्रजा का पालन करेंगे।

रामचरित मानस में सीता का सन्देश देते हुए हनुमान जी ने श्री सीता जी के प्रेम की बात इस प्रकार कही–

नाम पहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहि बाट।।

हनुमान के प्रति राम का कृतज्ञ भाव

हनुमान से यह वृतान्त सुनकर प्रसन्न हुए राम बोले– हनुमान्! तुमने यह बड़ा भारी काम किया है जो दूसरे पुरुष के चिन्तन में भी नहीं आ सकता था। तुम्हारे बिना इतने विस्तार वाले समुद्र को तैरना ही कठिन था। जिस पर राक्षसों से सुरक्षित लंका में प्रवेश तथा वहाँ से अपना कार्य सिद्ध कर, कुशलपूर्वक लौटना तुम्हारा ही काम है।

यो हि भृत्यो नियुक्तः सन् भर्त्रा कर्मणि दुष्करे।
कुर्यात् तदनुरागेण तमाहुः पुरुषोत्तमम्।। यु० १।७

''महावीर! वास्तव में तुमने एक आदर्श सेवक की भाँति सुग्रीव की आज्ञानुसार यह कार्य कर अपने को पुरुषोत्तम(यहाँ श्रीराम द्वारा हनुमान् के लिए ''पुरुषोत्तम'' शब्द का प्रयोग ध्यान देने योग्य है। क्या अब भी हनुमान बन्दर रहे?) बनाया है। इतने बड़े संकट–स्थान में पहुँचकर तुमने अपने आपको कृतकार्य कर सुग्रीव को भी प्रसन्न कर लिया। महात्मन्! तुम्हारे इस कार्य से मैं, रघुवंश और महाबली लक्ष्मण सब ही उपकृत हुए हैं।''

हनुम ते कृतं कार्य देवैरपि सदुश्करम्।
उपकारं न पश्यामि तव प्रत्युपकारिणः।।

इदानीं ते प्रयश्च्छामि सर्वस्वं मम मारुते।
इत्यालिंगय समाकृष्ण गाढं वानरपुंगवम्।।

साद्रनेत्रो रघुश्रेष्ठः परां प्रीतिमवाप सः।

पवनसुत हनुमान्! तुमने जो कार्य किया है वह देवताओं से भी होना कठिन है। मैं इसके बदले में तुम्हारा क्या उपकार करूँ, यह नहीं जानता। मैं अभी तुम्हें अपना सर्वस्व देता हूँ। यह कहकर रघुश्रेष्ठ श्रीराम ने हनुमान् को खींच कर गाढ़ आलिंगन किया। उनके नेत्रों में प्रेमाश्रु भर आये और वे प्रेम में मग्न हो गये। हनुमान् इन क्षणों में माता अंजना और पिता पवन की घोर तपस्या और गुरुदेव की अथक साधना का स्मरण कर श्रद्धानत हो गये।

पुरुष पुंगव राष्ट्रवीर हनुमान् जी के बल, पराक्रम, कार्य–कौशल, साहस और पवित्र प्रेम का इस प्रकरण में सभी रामायणों में बड़ा सुन्दर वर्णन मिलता है।

शिशु–यकृत रोग–नाशक दवा

दीपचन्द्र अग्रवाल, मथुरा

बच्चों को प्रायः लीवर की बीमारी हो जाती है और वह बड़ी भयानक होती है। सहज में अच्छी नहीं होती। यहाँ नीचे मैं एक नुस्खा लिख रहा हूँ, इससे बहुत से बच्चों की जान बच चुकी है। दवा यह है–

- जायफल(बाजार में पंसारी के यहाँ मिलता है), टींट की जड़(यमुना के खादर में बहुत मिलती है), बड़ी हर्रे, काला नमक।
- जायफल को गाय के दूध में तीन–चार बार उबालकर प्रयोग में लावें।

सेवन विधि–इस जायफल को तथा तीनों और चीजों को किसी साफ पत्थर पर रगड़कर एक चम्मच पानी में सुबह तथा शाम को ७–८ दिनों तक दें। प्रभु–कृपा से लाभ होगा यह अचूक रामबाण दवा है।

दौलत–धन–सम्पत्ति की दो लातें

–महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी

युग बीत गये। नगर में एक कंगाल भिखारी प्रातः–सायं सड़कों पर भीख माँगता दिखाई देता था। अकाल के कारण रोटी भी कठिनता से प्राप्त होती थी, परन्तु यह कंगाल अनुनय–विनय करके, रो–पीटकर लोगों से रोटी माँग ही लिया करता था। कुछ समय ऐसे ही व्यतीत हो गया। सौभाग्य से इस कंगाल को किसी से धन का एक कोष मिल गया और वह लाखोंपति बन गया।

अगले दिन जब लोगों ने इस निर्धन–कंगाल को देखा तो तड़क–भड़क वेशभूषा धारण किये अकड़ता हुआ सड़क पर टहल रहा था। लोग इसका ठाठ–बाट देखकर चकित रह गये। वह धन का अहंकार उसकी अकड़नों को बढ़ाता ही चला जा रहा था। इसके एक साथी भिखारी ने डरते–डरते पूछा–''क्योंजी! आज आपकी यह गर्दन सीधी क्यों नहीं होती और अकड़े हुए क्यों हो? उस धनिक कंगाल–गरीब ने उत्तर दिया–अभी दौलत की एक लात लगी है।''

यह ऐश्वर्यशाली निर्धन अब प्रतिदिन वैसे ही अकड़ते हुए इधर–उधर भ्रमण करता रहता। सौभाग्य से जो सम्पत्ति–धन उसे मिल गई थी, उसे खर्च करता रहता। कुछ समय तक ऐसा ही व्यवहार रहा, परन्तु दौलत–लक्ष्मी के पाँव भी एक स्थान पर टिकते नहीं। यह आज यहाँ कल वहाँ, परसों किसी अन्य स्थान पर। देश में फिर अकाल पड़ा। अन्न महँगा हो गया। डाकुओं और चोरों ने अपनी कर्यवाही आरम्भ की। यह ऐश्वर्यशाली निर्धन भी इनका शिकार हो गया। इसकी सारी सम्पत्ति लूट ली गई। भवन जला डाले गये और उसके रिश्तेदारों का वध कर दिया गया।

यही ऐश्वर्यशाली निर्धन अब वर्षों का बीमार हो गया। मुख पर पीलापन छा गया। कमर टेढ़ी हो गई। चलने के लिए हाथ में लाठी लेने की आवश्यकता होने लगी। यह ऐश्वर्यवान् निर्धन एक दिन उस सड़क पर जहाँ वह भीख माँगा करता था और जिस स्थान पर इसके एक भिखारी मित्र ने उससे ऐंठ और अभिमान का कारण पूछा था, उसे मिला। उसे टेढ़ी कमर किये चलता देखकर, भिखारी ने पूछा–''क्योंजी! यह आपको क्या हो गया है?'' निर्धन ने गर्दन नीचे किये ही उत्तर दिया–''यह दौलत की दूसरी लात लगी है।'' भिखारी ने उसे रोका और पूछा कि पहले भी तुमने मुझे कुछ ऐसा ही उत्तर दिया था और अब भी, इसका तात्पर्य समझाते जाओ।

निर्धन ने कहा–''दौलत की दो लातें होती हैं। जब यह किसी के पास आती है तब छाती पर लात मारती है, जिससे मनुष्य अकड़ जाता है, गर्दन सीधी नहीं होती और जब दौलत चली जाती है तब जाते हुए पीठ पर लात मारती है, जिससे कमर टेढ़ी हो जाती है।'' भिखारी ने कहा–''तो अच्छा है कि यह न किसी के पास आये और न किसी के पास से जाए।''

निर्धन–अब मैं भी यद्यपि इस सत्य को स्वीकार करता हूँ, परन्तु रह–रहकर उसकी याद आती है और वह दिल पर और भी बिजलियाँ गिराकर चली जाती है। परमेश्वर सबको इसकी दो लातों से बचाएँ।

फूलों का चित्र और भौंरा

—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी

एक भव्य महल के सजे हुए कमरे में एक सुन्दर युवक अकेला बैठा है। वह कमरे में लगे हुए चित्रों को ध्यानपूर्वक देख रहा है। दीवारों पर विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों, उद्यानों, गुलदस्तों—फूलों के गुच्छों, युद्धों और नाना प्रकार के दृश्यों के चित्र हैं। देखते—देखते उसकी दृष्टि एक पुष्प के चित्र पर रुक गई। चित्रकार ने उस फूल का चित्र बनाने में कमाल किया था।

पंखुड़ियों में वैसी ही सुर्खी थी, नीला और हरापन भी उसी मात्रा में दिखाई देते थे। दण्डी और उसके साथ लगे हुए काँटे तथा पत्ते भी वैसे ही दिखाई देते थे। लड़का चित्रकार की चित्रकला पर चकित हो रहा था और मन—ही—मन सोच रहा था कि सचमुच इस फूल के असली और नकली होने का विवेक करना तनिक कठिन है, इतने में उसने देखा कि एक भौंरा उड़ता हुआ कमरे में आया। उसने सारे कमरे में चक्कर लगाया और बड़ी व्याकुलता से फूल के चित्र पर बैठ गया, परन्तु वह शीघ्र ही फिर उड़ा और फूल के चित्र के इधर—उधर घूमने लगा।

भौंरा एक बार पुनः चित्र पर बैठा, परन्तु बैठते ही फिर उड़ा। उसकी उड़ान और उसकी चेष्टाऐं स्पष्ट बताती हैं कि उसका मन बेचैन हो रहा है। वह बेचैनी और घबराहट का शिकार हुआ—हुआ है। उसे किसी करवट चैन नहीं आता। भौंरा अब उड़कर कमरे से बाहर निकलना चाहता है, परन्तु फिर पलटा और आकर बड़ी बेचैनी से चित्र पर बैठ गया, परन्तु इस बार वह घबराकर उड़ा। उसके नन्हें—नन्हें पंखों से एक विचित्र—सी आवाज निकली, जिस आवाज ने हृदय में उतरते ही शब्दों का रूप धारण कर लिया और उन शब्दों का एक वाक्य बन गया। वही वाक्य युवक के मुख से एकदम फूट पड़ा—हे पुष्प के चित्र! तू सुन्दर है। तेरा रंग निःसन्देह धोखा देने वाला है, परन्तु तुझमें न असली फूल की—सी कोमलता है और न सुगन्ध है। मुझे शहद की आवश्यकता थी, जो तू मुझे नहीं दे सकता। तू किसी की आँखों को तनिक—सी प्रसन्नता देने के काम आ सकता है, परन्तु जो तुझसे धोखा खाकर तुझपर विश्वास करके तेरे सहारे आकर बैठते हैं, तू उन्हें न सुगन्ध देता है, न शहद। संसार में वे लोग भी उस फूल के चित्र के समान हैं, जिनका शरीर सुन्दर है, जो धनी हैं, परन्तु संसारवालों के कुछ काम नहीं आते। आवश्यकता वाले उनके पास आते हैं, परन्तु निराश जाते हैं। अनाथ इनके डर से काँपते और झिड़कियाँ खाते हुए निकलते हैं। ऐसे मनुष्य वास्तविक मनुष्य नहीं होते प्रत्युत नकली मनुष्य होते हैं।

वास्तविक मनुष्य वे हैं जो फूलों की भाँति संसार को सुगन्धित देते हैं, शहद देते हैं, जिनकी पंखुड़ियाँ दूसरों को सुख—शान्ति पहुँचाने के काम आती हैं, जिनके जीवन का एक—एक क्षण दूसरों के लिए समर्पित होता है।

पाठक! बतलाओ आप संसार के भीतर रहकर धोखा देनेवाले नकली फूल बनना चाहते हो, या असली। इस प्रश्न को मन में विचारो और उत्तर दो।

राष्ट्रवाद पर स्वामी दयानन्द का चिंतन

डॉ विवेक आर्य, बालरोग विशेषज्ञ, दिल्ली।

स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवादी चिंतन को हम इस लेख के माध्यम से अवगत करवाएंगे। अंग्रेजी राज में भारतीयों का स्वाभिमान लुप्त हो गया था। स्वदेशवासी स्वदेशवासियों पर अत्याचार करने पर उतारू थे। स्वामी दयानन्द ने सर्वप्रथम देशवासियों को मनुष्य बनने की प्रेरणा दी।

स्वामी जी सत्यार्थप्रकाश में मनुष्य की परिभाषा करते हुए लिखते है 'मनुष्य उसी को कहना कि जो मनन–शील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख–दुःख और हानि लाभ को समझे, अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हो, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रिय आचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी चले जावें, परंतु इस मनुष्य रूपी धर्म से पृथक कभी न होवे।'

स्वामी दयानन्द ने स्वदेशीय राज्य सर्वोपरि और उत्तम बताया। वह लिखते हैं 'अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखंड, स्वतंत्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पदाक्रांत हो रहा है। कुछ थोड़े राज्य स्वतंत्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार से दुःख भोगने पड़ते हैं।'

सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में वह लिखते हैं कि कोई कितना ही करे किन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत–मतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शुन्य, प्रजा पर पिता–माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं हैं।' उनके अनुसार विदेशियों का राज्य कभी भी पूर्ण सुखदायक नहीं होता। विदेशियों के आर्यावर्त में राज्य होने का कारण वह आपस की फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का सेवन न करना, विद्या न पढ़ना–पढ़ाना, बाल्यावस्था में अस्वयंवर विवाह, विषयासक्ति, कुलक्षण, वेद–विद्या का अप्रचार आदि कुकर्म है।

स्वामी जी आगे लिखते है कि जब आपस में भाई–भाई लड़ते है तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है। जब से विदेशी मांसाहारी इस देश में आकर गौ आदि पशुओं के मारने वाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुए हैं, तब से आर्यों के दुःख की बढ़ती होती जाती हैं। वह कहते हैं कि आपस की फूट से कौरव, पाण्डव और यादवों का सत्यानाश हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है। न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा या आर्यों को सब सुखों से छुड़ा कर दुःख सागर में डुबा मारेगा? (सत्यार्थप्रकाश)

स्वामी दयानन्द जी के अनुसार पारस मणि पत्थर सुना जाता है, वह बात तो झूठी है परन्तु आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारस मणि है कि जिसको लोहे रूपी दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं। (सत्यार्थप्रकाश)

आर्यों के राज्य के लाभों को गिनाते हुए स्वामी जी सत्यार्थप्रकाश में लिखते है कि एक

गाय के शरीर से दूध, घी आदि पदार्थों के उत्पन्न होने से मनुष्यों को लाभ होता है। गाय से उत्पन्न बछड़ी व बछड़ों से उसकी एक पीढ़ी में चार लाख पचहत्तर हजार छः सौ मनुष्यों को सुख पहुँचता है। वह कहते हैं कि ऐसे लाभकारी पशुओं को न मारें और न मारने दे। वह लिखते हैं, देखो! जब आर्यों का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे। तभी आर्यावर्त एवं भूगोल के अन्य देशों में मनुष्य आदि प्राणी बड़े आनंद में वर्तते थे, क्योंकि दूध, घी, बैल आदि पशुओं की उपलब्धता से अन्न, रस पुष्कल प्राप्त होते थे।

स्वामी जी भारतीयों को यूरोपियन का स्वदेश प्रेम सिखाते हुए लिखते है– 'देखो यूरोपियन अपने देश के बने हुए जूते को कचहरी और कार्यालय में जाने देते हैं इस देश के जूते को नहीं। इतने ही में समझ लो कि अपने देश के बने जूतों की भी जितनी मान प्रतिष्ठा करते हैं, उतनी भी अन्य देशस्थ मनुष्यों की नहीं करते।'

'देखो, सौ वर्ष से कुछ ऊपर इस देश में आये यूरोपीयनों को हुए, और आज तक ये लोग मोटे कपड़े आदि पहनते हैं। जैसा कि अपने स्वदेश में पहनते थे, परंतु उन्होंने अपना चाल चलन नहीं छोड़ा। और तुम में से बहुत लोगों ने उनका अनुसरण कर लिया। इसी से तुम निर्बुद्धि और वे बुद्धिमान ठहरते हैं।'

स्वामी जी अपनी निष्पक्षता बताते हुए सत्यार्थ प्रकाश में लिखते है– 'यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूं तथापि जैसे इसके मत–मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात किये बिना यथातथ्य प्रकाश करता हूं। वैसा ही बर्ताव दूसरे देश के मतवालों के साथ करता हूं। मेरा मनुष्यों की उन्नति का व्यवहार जैसा स्वदेशवासियों के साथ है वैसा ही विदेशियों के साथ है।' आर्याभिविनय में स्वामी दयानंद स्पष्ट रूप से लिखते है 'अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हो तथा हम कभी पराधीन न हो।' आर्याभिविनय में ही एक स्थान पर उन्होंने लिखा है 'हे कृपासिंधु भगवन ! हम पर सहायता करो जिससे सुनीति युक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यंत बढ़े।'

स्वामी दयानन्द राजा के उच्च आचरण पर जोर देते हुए सत्यार्थप्रकाश में लिखते है 'जैसा राजा होता है वैसी ही उसकी प्रजा होती है इसलिए राजा और राजपुरुषों को अति उचित है कि कभी दुष्टाचार न करें किन्तु सब दिन धर्म न्याय से बर्तकर सबके सुधार के दृष्टा बने।' स्वामी जी 1877 में एकता परिषद में प्रस्ताव में कहते है– 'हम भारतवासी सब परस्पर एकमत हो कर एक ही रीती से देश का सुधार करें तो आशा है भारत देश सुधर जायेगा। किन्तु कतिपय मौलिक मंतव्य में मतभेद होने के कारण सब एकता सूत्र में आबद्ध नहीं हो सके।'

सत्यार्थप्रकाश उत्तरार्द्ध की अनुभूमिका में स्वामी जी लिखते है 'जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्यामतान्तर का विरुद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योऽन्य को आनन्द न होगा।' स्वामी दयानंद से जब पूछा गया कि भारत का पूर्ण हित कब होगा या जातीय उन्नति कब होगी? स्वामी जी उत्तर देते है– एक धर्म, एक भाषा और एक लक्ष्य बनाये बिना भारत का पूर्ण हित और जातीय उन्नति का होना दुष्कर कार्य है। सब उन्नतियों का केंद्र स्थान ऐक्य हैं।

'श्रीमद्दयानंद प्रकाश' में स्वामी जी का विचार इस प्रकार से मिलता है 'जहाँ भाषा–भाव और भेष (वेशभूषा) में एकता आ जाय वहां सागर में नदियों की भांति सारे सुख एक–एक करके प्रवेश करने लग जाते हैं। मैं चाहता हूं देश के राजे–महाराजे अपने शासन में सुधार और संशोधन करें। अपने राज्यों में धर्म, भाषा और भावों में एकता उत्पन्न कर दें फिर भारत में अपने

आप ही सुधार हो जायेगा।' जब स्वदेशी भाषा को एकता का सूत्र मानने वाले स्वामी दयानन्द से जब वेदों का अन्य भाषा में अनुवाद रूपी प्रश्न पूछा गया तो स्वामी जी कहते है– 'अनुवाद तो विदेशियों के लिए हुआ करता है। नागरी के अक्षर थोड़े दिनों में सीखे जा सकते हैं। आर्यभाषा का सीखना कोई कठिन काम नहीं। फारसी और अरबी के शब्दों को छोड़कर, ब्रह्मावर्त की सभ्य भाषा ही आर्यभाषा है। यह अति कोमल और सुगम है। जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा को सीखने में परिश्रम नहीं करता, उससे और क्या आशा की जा सकती है? उसमें धर्म लग्न है, इसका भी क्या प्रमाण है? ऋषि दयानन्द प्रस्ताव करने वाले व्यक्ति को कहते हैं कि आप मुझे अनुवाद की सम्मति देते है परंतु दयानंद के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रचार होगा। मैंने आर्यावर्त में भाषा का एक्य संपादन करने के लिये ही अपने सकल ग्रन्थ आर्यभाषा में लिखे और सम्पादित किये है।'

स्वामी जी का मूल चिंतन वेदों पर आधारित था। वेदों में अनेक मन्त्रों में राष्ट्र की एकता एवं स्वाधीनता का सन्देश मिलता हैं। वेदों में स्वदेशी राज्य का सन्देश 'मनुष्यों को चाहिए कि पुरुषार्थ करके पराधीनता छुड़ाके स्वाधीनता को निरंतर स्वीकार करे।' (यजुर्वेद १५/५)। इस संसार में किसी मनुष्य को विद्या के प्रकाश का अभ्यास, अपनी स्वतंत्रता और सब प्रकार से अपने कामों की उन्नति को न छोड़ना चाहिए। (यजुर्वेद ५/४३)। राजपुरुषों को योग्य है कि भोजन, वस्त्र और खाने पीने के पदार्थों से शरीर के बल को उन्नति देवें, किन्तु व्यभिचार आदि दोषों में कभी प्रवृत न होवें। (यजुर्वेद ८/३६)। जिस देश में पूर्ण विद्या वाले राजकर्मचारी हों वहां सब की एक मति होकर अत्यंत सुख बढ़े। (यजुर्वेद ३३/६८)। राजा प्रजाजनों को चाहिए कि विद्वानों की सभा में जाकर नित्य उपदेश सुनें जिससे करने और न करने योग्य सब विषयों का बोध हो। (ऋग्वेद १/४७/१०)। लाला लाजपत राय ने स्वामी दयानंद के राष्ट्रवादी चिंतन पर गंभीर एवं अति महत्वपूर्ण टिप्पणी करते हुए अपनी पुस्तक ''आर्यसमाज'' में लिखा है– 'स्वामी दयानन्द का एक–एक शब्द चाहे उसे सत्यार्थ प्रकाश में पढ़िए, चाहे आर्याभिविनय में अवलोकन कीजिये, चाहे वेद भाष्य में देखिये, राजनैतिक स्वाधीनता की अभिलाषा से परिपूर्ण है। स्वामी दयानंद पूर्ण देशभक्त थे और जब कभी इस देश की स्वाधीनता का इतिहास लिखा जायेगा तो स्वामी जी का नाम उन महापुरुषों की प्रथम श्रेणी में अंकित होगा जिन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी में इस देश को स्वतंत्र करवाने की नींव डाली।'

राष्ट्र की अवधारणा और सभी मनुष्यों से समान रूप से व्यवहार करने का सन्देश ईश्वर द्वारा वेदों के माध्यम से सृष्टि के आरम्भ में ही दे दिया गया था। इसे विकसित करने की नहीं अपितु अपनाने की आवश्यकता है।

सन् 1947 के पश्चात वेदों पर आधारित और स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित एकता का यही सन्देश हमारे संविधान में अपनाया जाता तो आज हमारे देश में जितनी भी समस्याएं हैं जैसे भाषावाद, प्रांतवाद, मतवाद, परम्परावाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि, सबका निराकरण कब का हो गया होता। अभी भी समय है।

स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवाद रूपी चिंतन को अपनाया जाना चाहिए जिससे भारत देश फिर से संसार में शिरोमणि कहला सके। ऋषि के अनुसार मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य के निर्णय करने कराने के लिए है, न कि वादविवाद विरोध करने कराने के लिए।

अधिकतम युद्ध जीतने वाले हिंदू राजा ही पराजित दिखाए जाते हैं

—डा. राकेश कुमार आर्य, गाजियाबाद

शत्रु इतिहास लेखकों द्वारा लिखे गए हमारे इतिहास की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि इसमें अधिकतम युद्ध जीतने वाले हिंदू (आर्य) राजाओं को ही पराजित दिखाया जाता है। बहुत ही चालाकी के साथ हमारे हिंदू वीर योद्धाओं के विजयी युद्ध का उल्लेख या तो बहुत संक्षिप्त में किया जाता है या फिर किया ही नहीं जाता है। हमेशा उन्हें पराजित दिखाया जाता है।

अपनी बात के को स्पष्ट करने के लिए मैं यह कहना चाहूंगा कि अफगानिस्तान हम से रातोंरात नहीं चला गया था, बल्कि अफगानिस्तान को बचाए रखने के लिए कई सौ वर्ष तक हमारे कितने ही हिंदू राजाओं ने युद्ध किए थे और उनमें वह सफल भी रहे थे। परंतु वह सारा का सारा इतिहास आज लगभग लुप्तप्राय हो गया है। एक उदाहरण और देना चाहूंगा, हमारे वीर योद्धा हेमचंद्र विक्रमादित्य ने 1555—1556 में 22 अफगान—युद्ध लड़े थे जिनमें से वह 20 युद्धों को जीतने में सफल हुए थे, परंतु उनके विजयी युद्ध कहीं भी उल्लेखित नहीं किए जाते हैं।

मेवाड़ के राणा सांगा ने 100 से अधिक युद्ध लड़े, जिनमें मात्र एक युद्ध में पराजित हुए और आज उसी एक युद्ध के बारे में तो हम सब जानते हैं परंतु उनके अन्य विजय—युद्धों के बारे में कुछ नहीं जानते, ऐसा लगता है कि जैसे महाराणा संग्राम सिंह का इतिहास इसी पराजित युद्ध से आरंभ हुआ और इसी में समाप्त हो गया।

राणा सांगा द्वारा लड़े गए खंडार, अहमदनगर, बाड़ी, गागरोन, बयाना, ईडर, खातौली जैसे युद्धों की बात आती है तो हर इतिहासकार की लेखनी की स्याही सूख जाती है परंतु खानवा का युद्ध आ जाए तो उनकी लेखनी छलांग मारने लगती है।

हमारे इतिहास की पुस्तक से खातौली का वह युद्ध भी लगभग समाप्त सा कर दिया गया है जिसमें महाराणा संग्राम सिंह ने इब्राहिम लोदी को परास्त किया था। इतना ही नहीं इब्राहिम लोदी को महाराणा संग्राम सिंह ने दिल्ली तक खदेड़ा था। इस युद्ध में महाराणा ने अपना एक हाथ व पैर भी गवा दिये थे। उसके उपरांत भी वह महायोद्धा देश, धर्म व संस्कृति की रक्षा के लिए अंतिम समय तक संघर्ष करता रहा। उसके संघर्ष की गाथा को आज खोजना और उसे सही स्थान दिलाना हम सब के लिए चुनौती बन चुकी है।

खानवा के युद्ध में महाराणा संग्राम सिंह को पराजित दिखाने की घटना को बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया जाता है। ऐसे लगता है कि जैसे महाराणा संग्राम सिंह अपने देश व धर्म की रक्षा के लिए युद्ध करके एक अपराध कर रहे थे और बाबर यहां आकर अपना साम्राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से जो कुछ भी कर रहा था वह सब कुछ बहुत ही पुण्यमय था।

महाराजा पृथ्वीराज चौहान द्वारा कथित रूप से 16 बार मोहम्मद गौरी को हराया गया। परंतु उन 16 युद्धों के बारे में हमारे पास कोई प्रमाणिक जानकारी नहीं है। क्योंकि उनमें हमारे महा योद्धा की जीत हुई थी। जिसमें विदेशी जीता वह युद्ध तो बहुत प्रसिद्धि के साथ इतिहास में स्थान पा गया पर जिसमें हमारे वीर योद्धा ने विदेशी शत्रु को हराया उनके बारे में हमें कुछ नहीं बताया जाता ।

इसी प्रकार अपने महाराणा प्रताप के बारे में सोचिए। उनके और अकबर के मध्य होने वाले हल्दीघाटी के युद्ध को तो हम सब जानते हैं जिसमें एक षड्यंत्र के अंतर्गत अकबर को जीता हुआ दिखाया जाता है, जबकि सच यह था कि यह युद्ध अनिर्णीत रहा था और अकबर महाराणा प्रताप को जीत नहीं पाया था। इसके पश्चात महाराणा प्रताप ने 1576 से 1585 तक निरंतर अकबर को हर वर्ष होने वाले युद्धों में पराजित किया। एक से एक बड़ा सेनापति और योद्धा अकबर की ओर से महाराणा प्रताप के चित्तौड़ में जाता रहा और पराजित होकर लौटा। उन युद्ध और योद्धाओं के बारे में हमें कुछ भी नहीं बताया जाता। सारा इतिहास मौन साध जाता है। सबकी वाणी को पक्षाघात हो जाता है।

इन महान और गहरे षडयंत्रों को आज बेनकाब करने का समय आ गया है। यदि देशभक्त राष्ट्रवादी लोग आज भी सोते रहे तो समझ लो कि आपका आज का युद्ध आप की अंतिम पराजय लिखने में सहायक होगा। समय रहते चेतना होगा और अपने गौरवपूर्ण इतिहास को समझते हुए उसके अनुसार कदम उठाने होंगे।

रविवारीय साप्ताहिक सत्संग हेतु कार्यक्रम

प्रिय बन्धुओं,

यह अनुभव किया गया है कि आर्य समाजों के कार्यक्रमों में युवाओं की उपस्थिति बहुत कम होती है जो एक चिंता का विषय है। इसका कारण यह है कि साप्ताहिक सत्संगों में युवाओं की रुचि के अनुसार न तो कार्यक्रम ही बनाये जाते हैं और न ही उन्हें अपनी बात कहने का अवसर दिया जाता है। कुछ आर्य समाजों ने वैदिक विद्वानों से विचार विमर्श करके इस समस्या के समाधान हेतु अपने सत्संग के कार्यक्रमों में निम्न सारिणी के अनुसार परिवर्तन किये हैं जिसके सुखद परिणाम अनुभव किये गये हैं। आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप भी अपने आर्य समाज में इस समय सारणी को लागू करके देखें ताकि नव–युवकों/युवतियों को उचित प्रतिनिधित्व मिल सके और वह भविष्य में आर्य समाज की बागडोर सम्भाल सकें।

यज्ञ प्रार्थना सहित यज्ञ	30 मिनट
बच्चों/युवाओं की प्रस्तुति	10 मिनट
बच्चों/युवाओं हुतु उद्बोधन	10 से 15 मिनट
ईश्वर भक्ति के भजन	10 मिनट
सत्संग उपदेश–	25 मिनट
ध्यान	10 मिनट
शान्तिपाठ	

वैदिक साधन आश्रम तपोवन में वर्ष 2020 में होने वाले शिविरों, उत्सवों तथा समस्त कार्यक्रमों का संसोधित विवरण

महीना	कार्यक्रम का विवरण	अवधि	विद्वानों का विवरण
अप्रैल	1 प्राकृतिक चिकित्सा शिविर तपोवन आश्रम (ऊपरी भाग)	1 से 7 एवं 10 से 16 व 19 से 25 अप्रैल	योगाचार्य डा0 विनोद कुमार शर्मा मो–7500191719, 7017187173
	2 वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर(प्रथम स्तर)	22 से 29 अप्रैल	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
मई	1 वैदिक ज्ञान परीक्षा का आयोजन	3 मई एवं 7 मईप	. वेद वसु शास्त्री, मो–9897027872, 7906970130 श्री भगवान सिंह मो–7500011219
	2 वैदिक साधन आश्रम तपोवन का ग्रीष्मोत्सव	13 से 17 मईय	ज्ञ के ब्रह्मा डॉ० सोमदेव शास्त्री, मुम्बई भजनोपदेशक– श्री संदीप आर्य गिल, मेरठ
जून	1 युवतियों हेतु जीवन निर्माण शिविर	30 मई से 3 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2 युवाओं हेतु जीवन निर्माण शिविर	10 से 14 जून	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
जुलाईय	ोगदर्शन अध्ययन	15 से 31 जुलाईस	वामी आसुतोष जी रोजड़ रजि. फीस रु० 500/–
अगस्त	सांख्य दर्शन का अध्ययन	15 से 31 अगस्त	आचार्य सत्येन्द जी रोजड़ रजि. फीस रु० 500/–
सितम्बर	योग शिविर	15 से 30 सितम्बर	स्वामी अमृतानन्द जी रजि. फीस रु० 500/–
अक्टूबर	गायत्री यज्ञ	2 से 11 अक्टूबर	पं सूरत राम शर्मा जी
नवम्बर	1 वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर(प्रथम स्तर)	5 से 12 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	2 वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर	22 से 28 नवम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
दिसम्बर	सांख्य दर्शन सार(प्रथम भाग)	1 से 8 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य
	यज्ञ प्रशिक्षण शिविर	13 से 20 दिसम्बर	आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य

नोट– 1. वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी तपोवन देहरादून को उपरोक्त कार्यक्रमो की तिथि एवं विद्वानों के नामों में परिवर्तन करने का अधिकार है जिसकी सूचना पत्रिका के माध्यम से पूर्व में ही प्रकाशित कर दी जायेगी।

2 उपरोक्त कार्यक्रमों के लिये रजिस्ट्रेशन हेतु निम्न मोबाइल नम्बरों पर सम्पर्क कर सकते हैं
इं० प्रेम प्रकाश शर्मा सचिव, मो–9412051586, आश्रम कार्यालय, मो–7310641586

3 इस ईश्वरीय कार्य में प्रत्येक प्रतिभागी द्वारा यथासामर्थ्य स्वैच्छिक सहयोग देना अनिवार्य है।

4. आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य द्वारा आयोजित योग शिविरों के लिए सम्पर्क सूत्र श्री एन.के. अरोड़ा, मोब. 9310444170

अर्श या बावासीर

आयुर्वेद के अनुसार बावासीर के छः भेद होते हैं–वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, रक्तज और सहज। सामान्यतः बावासीर के दो भेद माने गये हैं–बादी और खूनी

लक्षण–बावासीर के मस्सों के प्रक्षुभित हो जानेपर शौच के समय भीषण कष्ट होता है। यहाँ तक कि बैठने में भी दर्द होता है। शौच के समय खूनी बावासीर से काफी मात्रा में रक्त निकलता है। कभी–कभी तो शौच के समय 100–200 ग्राम रक्त निकल जाता है। अधिक चलने से मस्से में रगड़ होने से रक्तस्राव होने लगता है। रोग की तीव्रावस्था में किसी भी समय रक्तस्राव हो सकता है। मस्सों में सूजन और जलन लगातार होती रहती है। बादी बावासीर में रक्त नहीं निकलता, पर सूजन के कारण शौच के समय तथा वायु निकल ने में, चलने–फिरने और बैठने में भी बहुत कष्ट होता है।

कारण–अनियमित रहन–सहन, कड़वा–कसैला, नमकीन, खट्टा, चाय–कॉफी, मिर्च–मसाला से युक्त बासी एवं गरिष्ठ भोजन, मद्यपान, अजीर्ण तथा कब्ज बने रहना, शौच के समय खूब जोर लगाना, काफी देर तक एक ही स्थान पर बैठे रहने का कार्य करना, दिवाशयन, वात–पित्त–कफ का प्रकुपित होना इत्यादि बावासीर होने के प्रमुख कारण हैं। चरकन गर्भपात, गर्भावस्था तथा विषमप्रसूति को भी अर्ष का कारण माना गया है क्योंकि इनसे भी गुदा की शिराओं में दबाव पड़ता है। अधिक ठंडे स्थान पर देर तक बैठे रहने से भी गुदा की शिराओं के संकुचित हो जाने से भी अर्श उत्पन्न हो जाता है। मद्य का अत्यधिक सेवन पित्तज अर्शकी उत्पत्ति करता है।

रोग की साध्यता–जो बावासीर अन्तिम बाहरी आवर्त में होती है और 1 वर्ष से अधिक समय की नहीं होती, उसकी चिकित्सा साध्य है। दूसरे आवर्त में उत्पन्न मांसांकुर कष्टसाध्य होता है। जो बावासीर बहुत समय की हो, वात–पित्त एवं कफ तीनों दोषों के प्रकुपित होने से हो, गुदा के भीतर की पहली सबसे भीतर के आवर्त में उत्पन्न हो, वह प्रायः असाध्य होती है।

चिकित्सा–बावासीर की चिकित्सा में यह ध्यान रखना चाहिये कि किसी भी प्रकार से कब्ज न रहे। कब्ज के लिये निम्न योग लेना चाहिये–

1. प्रातः सूखे आँवले का चूर्ण २ ग्राम।
2. दोपहर को ईसबगोल की भूसी १० ग्राम की मात्रा में नीबू–पानी के साथ।
3. रात को सोते समय १० ग्राम त्रिफलाचूर्ण दूध के साथ लें। इसके अतिरिक्त दो हर्रे भी पानी के साथ निगल सकते हैं।

होमियोपैथी–होमियोपैथी के अनुसार अर्शकी सद्यः लाभकारी एक अनुभूत चिकित्सा इस प्रकार है–

1. प्रातः सल्फर–३० शक्ति की ५–६ गोलियाँ खाली पेट लें।
2. एस्क्यूलस मूल अर्क ४ बूँद आधा छटाँक पानी में डालकर प्रत्येक चार घंटे पर लें। यदि रक्तस्राव भी होता है तो हेमामेलिस

मूल अर्क ४ बूँद आधा छटाँक पानी में डालकर प्रत्येक चार घंटे पर लें।

3. रात को सोते समय नक्सवोमिका–२०० शक्ति एक खुराक लें। ध्यान रहे कि औषधियाँ लेने के आधे घंटे पहले या बाद में कुछ भी न खायें–पियें।

होम्योपैथी–औषधि खाली पेट लेनी चाहिये। होमियोपैथी–औषधियाँ लक्षण के अनुसार दी जाती हैं। एक ही रोग में भिन्न–भिन्न व्यक्तियों के लिये लक्षण के अनुसार भिन्न औषधि चयन की जाती है। किसी एक रोग के लिये एक ही दवा नहीं होती। उक्त औषधि से अनेक रोगियों को सद्यः लाभ हुआ है। जो व्यक्ति अनेक औषधि करके निराश हो चुके हैं और ऑपरेशन के अतिरिक्त कोई मार्ग न बचा हो, उन्हें अवश्य इस अनुभूत औषधि का परीक्षण करना चाहिये।

आयुर्वेदिक योग–

(१) (क) भोजन के बाद दो चम्मच अभयारिष्ट समान जल लें।

(ख) काले तिल का चूर्ण तथा भिलावेका चूर्ण समान मात्रा में लेकर मट्ठे के साथ दो–तीन बार पियें।

(ग) बेल का मुरब्बा या कच्चे बेल को भूनकर खायें।

(घ) सूरन का भरता लाभप्रद है।

(ङ) कोष्ठशुद्धि के लिये एरण्ड का तेल पीना चाहिये। दर्द तथा जलन के स्थानपर भाँग अथवा अफीम बाँधनी चाहिये।

(च) गाय के दूध के मट्ठे में लवणभास्करचूर्ण मिलाकर प्रातः और दोपहर में पियें। मट्ठे का अधिकाधिक सेवन करें।

(२) करेले के रस में मिश्री मिलाकर पीने से बावासीर में लाभ पहुँचता है।

(३) रसौत ७ ग्राम, मुनक्का बीजसहित १४ ग्राम और कतीरा ७ ग्राम–इनको कूट–पीसकर महीन चूर्ण बनायें। छोटी बेर के बराबर इसकी गोलियाँ बनाकर प्रतिदिन सुबह–शाम सेवन करें।

(४) कमल की केशर, शहद, ताजा मक्कखन, नागकेशर और चीनी एक में मिलाकर खायें। यह रक्तार्ष में हितकर है।

(५) लाल चन्दन, चिरायता, धमासा और सोंठ गोली दूध के साथ लें।

(६) (क) चन्द्रप्रभावटी सुबह–शाम एक–एक गोली दूध के साथ लें।

(ख) कुमार्यासव दो चम्मच तथा दशमूलारिष्ट दो चम्मच मिलाकर समान जल से भोजन के बाद दिन में दो बार लें।

क्षारसूत्र–चिकित्सा–इस पद्धति में क्षारसूत्रद्वारा मस्सों को बाँध देते हैं। सूत्र में लगे क्षार अपने औषधीय गुणों से मस्सों को काट देते हैं। मस्सों में अपामार्गक्षार, उदुम्बरक्षार, स्नूहीक्षार नियमितरूप से लगाने पर मस्से सूखकर बाहर निकल जाते हैं। बड़े मस्सों के लिये क्षारसूत्र का प्रयोग करते हैं। मजबूत धागेपर हल्दी, क्षार एवं स्नूही के दूध की क्रमशः २१ परतें चढ़ाकर सुखाने के बाद क्षारसूत्र तैयार होता है। क्षारसूत्र से मस्से को कसकर बाँध देते हैं। जिससे बँधे स्थानपर मस्सा कटता जाता है और घाव भी स्वतः ठीक होता जाता है। प्रत्येक सप्ताह क्षारसूत्र बदल दिया

जाता है। क्षारसूत्र लगवाने के घंटे–दो–घंटे बाद सामान्य रूप से कार्य किया जा सकता है। इस समय अर्शोघ्री वटी, शोभांजन वटी लें तथा मस्सों पर जात्यादि तेल लगाना चाहिये। हृदयरोग, मधुमेह, मोटापा, अल्सर और टी०वी० के रोगी को क्षारसूत्र नहीं लगाना चाहिये। पहले इन रोगों की चिकित्सा करनी चाहिए।

एलोपैथी–एलौपैथी चिकित्सा–पद्धति में कब्ज के लिये विरेचक औषधियों को देते हैं। शौच में कष्ट दूर करने के लिए कुछ मलहम आदि का प्रयोग करते हैं। रोग की तीव्रावस्था में मस्सों का ऑपरेशन कर देने पर आरोग्य हो जाता है। परहेज इसमें भी पर्याप्त मात्रा में अपेक्षित हैं। एलोपैथी में इसका कोई स्थायी उपचार नहीं है। यह ध्यान रखना चाहिए कि एक बार स्वस्थ होने के बाद अपने रहन–सहन और खान–पान को ठीक रखें, अन्यथा इस कष्टदायी रोग से पुनः ग्रस्त होने की सम्भावना रहती है।

पथ्य–नेनुआ, तुरई, लौकी, मूली, खीरा, पपीता(कच्चा एवं पका), भिंडी, पुराना चावल, मूँग की दाल, कुलथी की दाल, बथुआ, करेला, टमाटर, सूरन, मिश्री, किशमिश, इलाइची, मट्ठा, गोमूत्र, चोकरयुक्त आटे की रोटी अर्शरोग में हितकर है।

अपथ्य–खट्टा, मिर्च–मसाला, बासी एवं गरिष्ठ भोजन, पिट्ठी, उड़द, तले–भुने पदार्थ, कोहँड़ा, बैंगन, अरवी, बंडा, आलू, मल–मूत्र और अपानवायु के वेगों को रोकना, दिवाशयन, अत्यधिक चलना–फिरना और परिश्रमसाध्य कार्य करना।

सबके लिये सत्यार्थ प्रकाश

पं० वेद प्रकाश शास्त्री

अबालवृद्ध सभी के लिए सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि–

1. यदि किशोर पढ़ेंगे तो उनके जीवन का मार्ग प्रशस्त होगा। उन्हें अपना शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास करने की प्रेरणा मिलेगी।
2. इसे तरुण पढ़ें ताकि इसमें निर्दिष्ट जीवन दिशा के द्वारा अपना भविष्य बना सकें।
3. प्रौढ़जन पढ़ें ताकि जीवन यापन करते समय व्यवहार में हो जाने वाली त्रुटियों तथा दोषों को जानकर अपना सुधार कर सकें।
4. वृद्धजन पढ़ें ताकि वर्तमान जीवन में अपनी बुद्धि, योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार अपने किए कर्मों का स्मरण कर आगामी जीवन को उत्तम बनाने का प्रयत्न करें।
5. ब्राह्मण एवं अध्यापक वर्ग पढ़ें ताकि उन्हें सच्ची शिक्षा एवं उपयोगी विद्या के उद्देश्य का ज्ञान हो सके और वे सभी स्त्री–पुरुषों तथा छात्र–छात्राओं को बिना वर्ण, जाति, कुल, ऊँच–नीच आदि भेदभाव के बिना समान रूप से धार्मिक विद्वान् बना सकें।
6. क्षत्रिय, सैनिक, राज्याधिकारी पढ़ें जिससे वे अपने कर्त्तव्यों का बोध प्राप्त कर राष्ट्र की अभिवृद्धि करें। साधुपरित्राण तथा दुष्टों का विनाश कर विश्व में मतविहीन धर्मराज्य की स्थापना कर सकें।
7. विभिन्न मतावलम्बी पढ़ें जिससे वे अपने–अपने मत के दोषों–त्रुटियों का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकें।

इस प्रकार सभी पढ़ें ताकि वे समानता, स्वतंत्रता तथा भ्रातृभाव की शिक्षा ग्रहण करके परस्पर मिलकर राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को बनाये रख सकें।

चतुर्वेद पारायण यज्ञ के सम्बन्ध में साधिका के विचार

—श्रीमती रेखा चौधरी जी गुडगाँव

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून (उपरी प्रभाग) में स्वामी चित्तेश्वरानन्दजी सरस्वती के द्वारा पूर्व वर्षों की भांति इस वर्ष भी 18 फरवरी से 8 मार्च 2020 तक योग साधना एवं चतुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें 40 साधकों ने भाग लिया। यज्ञ के ब्रह्मा स्वामी मुक्तानन्दजी, रोजड़ ने प्रतिदिन वेदमंत्रों की सारगर्भित व्याख्या की। सभी साधकों को प्रातः 3 बजे उठकर स्नान आदि से निवृत होकर ठीक 4 बजे सत्संग भवन में जाना अनिवार्य था जहां प्रातःकालीन मंत्र ब्रह्म यज्ञ, ध्यान एवं प्राणायाम तथा योगासन प्रशिक्षित योगाचार्य द्वारा कराये जाते थे। ठीक 7 बजे यज्ञ प्रारम्भ होता था जो 10 बजे पूर्ण होता था। इसीप्रकार सायं 3 बजे से 6 बजे तक यज्ञ, 7 बजे से 8 बजे तक संध्या एवं योगासन कराये जाते थे। इस कार्यक्रम में देश के विभिन्न भागों से आर्य भाई—बहनों ने अति उत्साह के साथ भाग लिया। इस आयोजन में स्वामी विशुद्धानन्दजी का विशेष योगदान रहा। आश्रम के प्रधान श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री जी तथा अन्य सदस्यों ने पूर्ण आहूति में सम्मिलित होकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई।

कण—कण में व्यापक परमपिता की महती अनुकम्पा व प्रेरणा से पूज्य गुरुदेव स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी ने हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी प्रभुआश्रित जी की तपः स्थली पर चारों वेदों का यज्ञ, साधना, स्वाध्याय के लिये शिविर का आयोजन किया। इस अवसर पर अति सरल, तपस्वी, शान्त व गम्भीर स्वभाव के धनी, यज्ञ के ब्रह्मा स्वामी मुक्तानन्द जी(रोजड़) का विशेष आशीर्वाद प्राप्त हुआ। उन्होंने समय—समय पर वेद मन्त्रों का अर्थ बहुत ही सरल शब्दों में समझाया। वैदिक साधन आश्रम के मन्त्री पूज्य श्री प्रेम प्रकाश शर्मा जी की प्रेरणा से उनके कुछ शब्दों का संकलन करके लिखने का प्रयास कर रही हूँ।

ओ३म् अग्निमीडेः पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।1।

1. स्वामी जी ने मन्त्रों की व्याख्या करते हुऐ बताया कि वेद का प्रारम्भ अग्नि से होता है! परमात्मा को अग्नि कहते हैं क्योंकि वह सब क्षेत्रों में सबसे आगे है। भौतिक अग्नि से हम यज्ञ करते हैं वो सदा ऊपर को उठती है। अग्नि की उपासना से हमारा जीवन भी सदा ऊपर उठेगा। इसलिये प्रतिदिन इसी भावना से यज्ञ करें कि हमारा जीवन सदा ऊपर उठे। कभी नीचे को न जाये। अग्नि प्रज्वलित होने पर अन्धकार दूर हो जाता है व प्रकाश हो जाता है। इसी प्रकार हमारे जीवन में कभी भी अविज्ञा, अज्ञान का अन्धकार न हो। हमारा जीवन सदा ज्ञान से प्रकाशित हो। अग्नि में सदा गति रहती है। इसी प्रकार हमारा जीवन भी सदैव गतिशील रहे। भैतिक अग्नि व परमात्मा में ये गुण हैं इसलिये हम अग्नि की व परमात्मा की उपासना करते हैं।

2. शरीर के पाँच प्राण— प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान। प्राणों के द्वारा ही आधिभौतिक शरीर तथा मन में क्रियाकलापों का संचरण होता है।

परमात्मा प्राण को बनाने वाला व बढ़ाने वाला है! परमात्मा ने नस नाडियां बनाई उसमें प्राण का संचार किया जो परमात्मा के अतिरिक्त कोई नहीं कर सकता। हम रात को सो जाते हैं फिर भी प्राण चलते रहते है। अतः प्राण को चलाने वाला परमात्मा है। परमात्मा ने प्राण की रचना की और पुष्टि के लिये अन्न, फल, फूल, कन्द आदि बनाये।

3. शारीरिक व मानसिक जितने भी रोग हैं सब प्रज्ञा अपराध के कारण होते हैं। प्रज्ञा अपराध अर्थात् धी(बुद्धि), धृति(धैर्य), स्मृति(याद रहना) का भ्रष्ट हो जाना। यदि धी, धृति स्मृति बनी रहे तो रोग आक्रमण नहीं करेंगे। परमात्मा की उपासना करने से धी, धृति व स्मृति कभी भ्रष्ट नहीं होती जिससे शारीरिक व मानसिक क्लेशों से बचे रहते हैं।

4. परमात्मा उपदेश करते हैं कि यज्ञों के द्वारा यज्ञों का यजन करना चाहिये। देवता(जो देता रहता है) यज्ञ करते हैं।

सृष्टि के आरम्भ में देवों, ऋषियों ने यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। तभी से संकल्प पाठ में सृष्टि की आरम्भ की गणना की जाती है। यज्ञ के द्वारा धर्म अर्थ काम मोक्ष(चार चतुष्टय) प्रयोजन पूर्ण होते हैं। यज्ञ करने वाला परमात्मा का सखा बन जाता है क्योंकि यज्ञ करके वह परमात्मा की आज्ञा का पालन कर रहा है। यज्ञ से धर्म प्रारम्भ होता है। इसी यज्ञ से देवताओं ने सृष्टि का प्रसार किया। देवता लोग यज्ञ के द्वारा अपने प्रयोजन को सिद्ध कर लेते हैं तथा इस जन्म में व अगले जन्म में महिमा को प्राप्त होते हैं।

यज्ञ का फल याज्ञिक को मिलता है। पुरोहित या ब्राह्मण को नहीं मिलता। पुरोहित को केवल दक्षिणा ही मिलती है। परमात्मा भी यज्ञ कर रहे हैं और वो दक्षिणा भी दे रहे हैं। दक्षिणा का अर्थ दक्षता है। हमारे अन्दर जो दक्षता है वो ही परमात्मा की दक्षता है। जो यज्ञ करते हैं वो ही मुक्ति को प्राप्त करते हैं। मुक्ति अर्थात छोड़ना। यज्ञ से छोड़ने का अभ्यास बन जाता है। स्वाहा व इदन्न मम् करते–करते एक दिन बाहर व अन्दर से सारा छूट जायेगा। जब तक हमारा ममत्व रहता है तब तक हमारा जन्म मरण चलता रहता है। स्वस्वामी सम्बन्ध ही बन्धन का कारण है। अभ्यास करते–करते जब अन्दर से अनुभव में आ गया कि मेरा कुछ भी नहीं है तो मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं अर्थात् अमृत्व को प्राप्त कर लेते हैं। यज्ञ करने वाले को परमात्मा ज्ञान प्रदान करते हैं। उनको सुमेधा बुद्धि प्राप्त होती है, वो स्वयं का कल्याण करके औरों का भी कल्याण कर सकते हैं। (यज्ञ अर्थात् स्वेच्छा से स्वकर्म की निष्काम रूप से निरन्तर आदत)

5. सारी सृष्टि को बनाने वाला परमात्मा हम सबके अन्दर विद्यमान है और क्लेश हम से पृथक है फिर भी हम उसको नहीं जानते क्योंकि हमारे व परमात्मा के बीच में कुहरा आ गया है वह कुहरा क्लेश का है जो कि पांच प्रकार के हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश।

इनमें सबसे मुख्य रूप में अविद्या है। यदि अविद्या अधिक है तो क्लेश भी अधिक होंगे। यदि अविद्या कम है तो क्लेश भी कम होंगे। यह अविद्या ही कुहरे के रूप में, पर्दे के रूप में परमात्मा के दर्शन नहीं होने देता।

यह अविद्या है 1–नित्य को अनित्य व अनित्य को नित्य, 2–पवित्र को अपवित्र व अपवित्र को पवित्र मानना, 3–अनात्म को आत्मा मानना, 4–चेतन को जड़ व जड़ को चेतन मानना। सांख्य दर्शन के अनुसार इसी को भौतिक प्रकृति में पुरुष(आत्मा) का परस्पर द्वन्द भी कहते हैं।

इसी अविद्या के कारण हम परमात्मा को नहीं जान पाते। परमात्मा को न जान पाने का दूसरा कारण जल्पया है। अधिक बोलने वाला व्यक्ति परमात्मा को नहीं जान सकता क्योंकि बोलने के कारण वृत्ति सदा बाहर रहती है। बाह्य वृत्ति के कारण अन्दर ध्यान नहीं जाता। अधिक बोलना, झूठ बोलना, कठोर बोलना, चुगली, निन्दा आदि सब वाणी के दोष हैं असम्बन्धित बातों का प्रलाप करना यह सब उपरोक्त दोष जल्पया के अन्तर्गत हैं। इसके कारण से हम परमात्मा को नहीं जान पाते है।

असुतृप तीसरा कोहरा है। हर समय प्राण पोषण में ही लगे रहना। अर्थात् इन्द्रियों की वृत्ति के लिये विषय भोगों में लगे रहना। खाना–पीना, सूंघना, देखना में ही लगे रहना। इन विषयों में सुख दिखाई देता है तो हम इन विषयों की ओर आकर्षित होते रहते हैं। इसीलिए ईश्वर अन्दर विराजमान होते हुए भी हम उपरोक्त कुहरे के कारण ईश्वर को अनुभव नहीं कर पाते।

इस प्रकार से प्रवचनों की श्रृंखला चलती रही और हम सब साधक व साधिकाऐं स्वामी जी से ज्ञान प्राप्त करते रहे। अब ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि इन उपदेशों को हम जीवन में व्यवहार में ला सकें तो ही हमारा यहाँ पर साधना शिविर में आना सार्थक हो सके

ओ३म् इति

आर्य वैदिक विदुषियाँ

1. आचार्या मेधा देवी, वाराणसी 05422360340
2. आचार्या प्रियम्वदा वेदभारती, नजीबाबाद 9412824424
3. श्रीमती पुष्पा शास्त्री, रेवाड़ी 9416063677
4. सुश्री नन्दिता शास्त्री, वाराणसी 9235539740
5. डॉ० विजय लक्ष्मी, मुजफ्फरनगर 9412307123
6. डॉ० अन्नपूर्णा, देहरादून 9319054421
7. डॉ० प्राची दीदी, बागपत 9837341124
8. कु० पूनम व प्रवेश आर्या, रोहतक 9416630916
9. आचार्या धारणा शास्त्री, शिवगंज 02976220629
10. श्रीमती सुदेश आर्योपदेशिका, दिल्ली 9810448252
11. श्रीमती कमला शास्त्री, दिल्ली 9810134431
12. आचार्या सुनीता आर्या, दिल्ली 9891175076
13. श्रीमती प्रभा शास्त्री, बरेली 9412376592
14. आचार्या डॉ० सुधा शास्त्री, दिल्ली 9871218737
15. श्रीमती मिथलेश शास्त्री, हरिद्वार 9411373539
16. आचार्या सूर्यदेवी, शिवगंज (राज.) 9680674789
17. श्रीमती मृदुला अग्रवाल, कोलकत्ता 9836841051
18. कु० अंजली आर्या, मुजफ्फरनगर 9719566946
19. डॉ० सरस्वती चतुर्वेदी, वाराणसी 05422315630
20. श्रीमती सुमित्रा विद्यालंकार, औरेया 9456002544
21. श्रीमती मधुबाला शास्त्री, पानीपत 9466029683
22. श्रीमती लक्ष्मी भारती, हरियाणा 9813237212

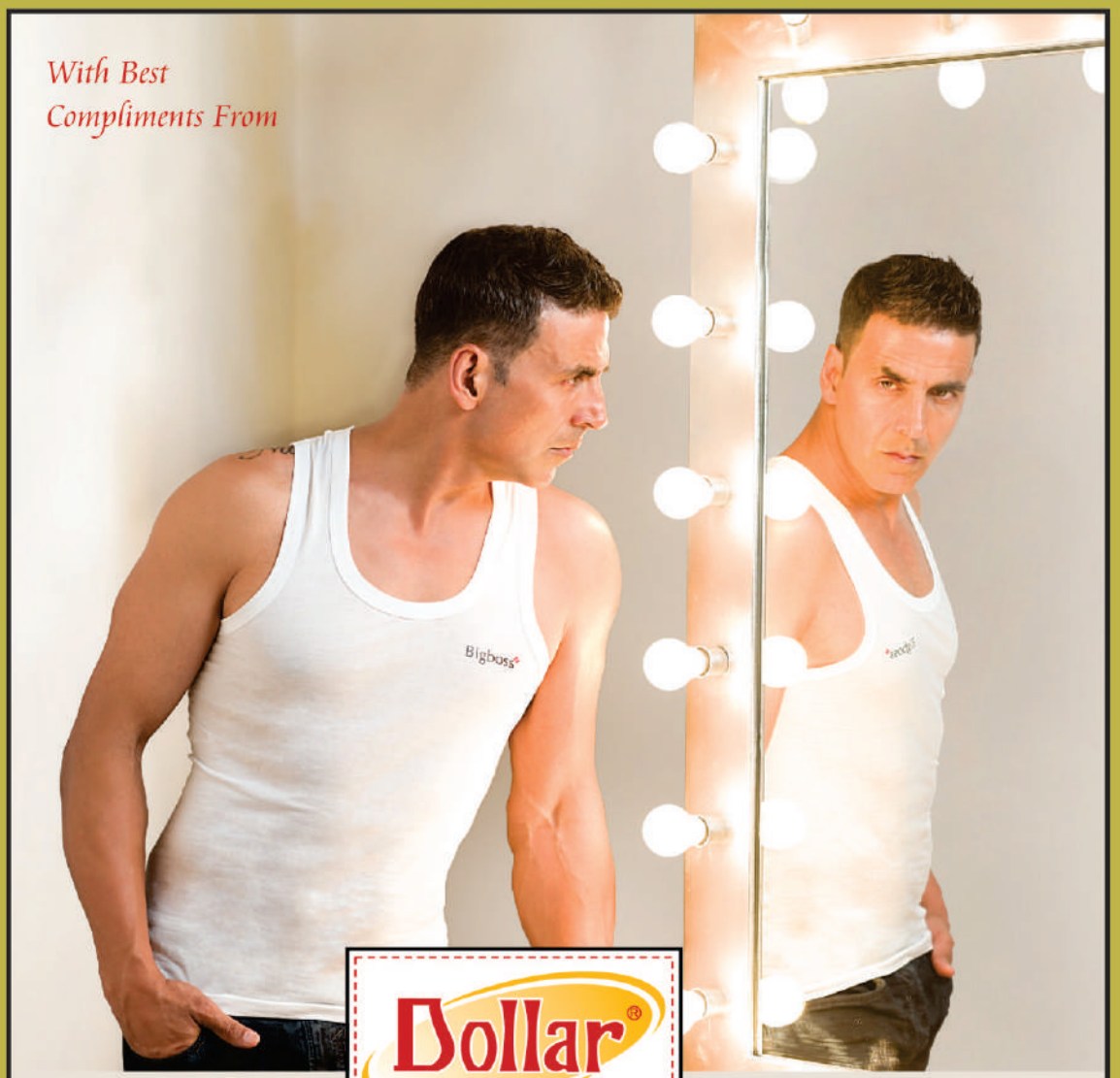

Bigboss

PREMIUM INNERWEAR

Fit Hai Boss

www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals

Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

TPM Certified

ISO / TS - 16949 - 2002 Certified

ISO - 14001 Certified

OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गाँव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गाँव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई–मेल : akhilg333@gmail.com